आरोग्य-दिग्दर्शन ।

हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला-   द्वितीय सुमन।

आरोग्य-दिग्दर्शन।

कर्मवीर महात्मा मोहनचन्द करमचंद गाँधीके
" आरोग्य विषे सामान्य ज्ञान " नामक
गुजराती पुस्तकका
अनुवाद।

अनुवादक-
श्रीयुक्त पं० गिरिधर शर्मा झालरापाटन।

प्रकाशक-
हिन्दी-गौरव-ग्रन्थ कार्यालय,
गिरगाँव-बम्बई।

प्रथम संस्करण।

आश्विन १९७३।   कीमत ग्यारह आने।

प्रकाशक—
उदयलाल काशलीवाल,
हिन्दी-गौरव-ग्रन्थ कार्यालय,
गिरगाँव, चन्दावाड़ी बम्बई ।

मुद्रक,
रा. रा. चिंतामण सखाराम देवळे,
मुंबईवैभव प्रेस, सर्व्हंट्स् ऑफ इंडिया
सोसायटीज् होम, सँढर्स्ट रोड, गिरगाँव, मुंबई ।

विषयसूची ।

पूर्वार्द्ध ।

उत्तरार्द्ध ।

मूल-लेखककी प्रस्तावना।

लगभग बीस वर्षसे मैं आरोग्यके सम्बन्धमें विचार करता आ रहा हूँ। वलायतमें कुछ खास नियमों पर रहनेके कारण खाने-पीने आदिका सब प्रबन्ध मुझे अपने ही हाथों करना पड़ता था। इस कारण उस समय मुझे जो जो अनुभव हुआ उस परसे मैंने अपने कई विचार स्थिर किये हैं। वे विचार इंडियन-ओपिनियनके पाठकोंको भी उपयोगी हों, इसलिए मैं उन विचारोंके सम्बन्धमें कुछ लिखना उचित समझता हूँ।

अँगरेजीमें एक कहावत है कि 'रोग दूर करनेकी अपेक्षा उसे मूलहीसे न होने देना बहुत अच्छा है।' इसी बातको यह कहावत भी पुष्ट करती है कि 'पानीके पहले बाँध बाँधा जाय।' रोग न होनेके उपायोंको उपयोगमें लानेको अँगरेजीमें 'हाईजन' कहते है। हमारी भाषामे इसे 'आरोग्य-संरक्षण-शास्त्र' कहते है। यह शास्त्र वैद्यक शास्त्रसे पृथक् समझा जाता है। कुछ लोग इसे वैद्यकका ही अंग बतलाते है। मैं जो इसमें भेद बतला रहा हूँ, उसका सिर्फ यही कारण है कि प्रधानतासे इन प्रकरणोंमें आरोग्य-रक्षाके उपाय ही बतलाये जावेंगे। जिस भाँति खोया हुआ रत्न बड़ी कठिनतासे मिलता है और जितना प्रयत्न हमें उसकी रक्षाके लिए करना पड़ता है उससे कहीं अधिक उसके ढूँढ़नेके लिए करना पड़ता है, उसी भाँति आरोग्य-रत्न एकवार भी यदि हमारे हाथसे खोगया—आरोग्यको हम गँवा बैठे तो फिरसे उसे प्राप्त करनेके लिए हमें समय और प्रयत्नका बहुत ही व्यय करना पड़ेगा; इस कारण विचारशील मनुष्योंको आरोग्य-रक्षाके नियमों पर बहुत ही ध्यान देनेकी आवश्यकता है। हम इस जगह इस बात पर भी विचार करेंगे कि कारणान्तरोंसे नष्ट होगया आरोग्य किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

अँगरेजीके प्रसिद्ध कवि मिल्टनने लिखा है कि मनुष्योंका मन ही स्वर्ग और नरक है। इसके सिवा न तो कोई नरक पृथ्वीके नीचे है और न स्वर्ग आकाशमें। हमारे शास्त्रोंमें भी यह कहा गया है कि "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध-मोक्षयोः।" अर्थात् मन ही बन्धन (नरक) और मोक्ष (स्वर्ग) का कारण है। इस नीतिके अनुसार यह कहा जा सकता है कि अपनी नीरोग या सरोग अवस्थाका मनुष्य स्वयं ही कारण है। जिस भाँति हम अपने कर्मोंसे—अनुचित आहार-विहारसे बीमार हो जाते हैं उसी भाँति उसी प्रकारके विचारोंसे भी हमें बीमार होना पड़ता है। ऐसे बहुतसे उदाहरण देखे गये है कि बच्चेको हैजा हुआ कि उसे देखकर उसके पिताको भी वह होगया है। एक प्रसिद्ध वैद्यने लिखा है कि जितने बीमार महामारी आदि रोगों द्वारा मरते हैं उससे भी ज्यादा लोग केवल भयके कारण मर जाते है। यह कहावत विचारने योग्य है कि 'भयवान बिना मौतके मर जाता है।'

इसके सिवा अज्ञान भी आरोग्यको नष्ट करनेका एक प्रधान कारण है। हम पर कभी कोई आकस्मित विपत्ति आ पड़ती है तो उस विषयमें कुछ जानकारी न होनेके कारण निरुपाय होकर हम बड़े ही घबरा उठते है और फिर उस घबराहटके मारे, जाते है अच्छा करने और हो जाता है बुरा। शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाले साधारण नियमोंकी भी हमें जानकारी न होनेके कारण बहुत बार हम न करने योग्य कामोंको कर बैठते है अथवा स्वार्थी, धूर्त और 'ऊँट-वैद्य' वैद्योंके हाथमें पड़ कर सिर पर अनेक तरहकी हानियाँ उठा लेते हैं। यह बात आश्चर्य कारक होने पर भी सत्य है कि हमें दूर पर रक्खी हुई वस्तुके ज्ञानकी अपेक्षा हमारे पास रक्खी हुई वस्तुका बहुत ही कम ज्ञान होता है। हमें अपने मुहल्लेकी भूगोलका जानना अच्छा नहीं लगेगा, पर इंग्लेंडके गॉव, नदी वगैरहके नाम हम खूब रट डालेंगे। आकाशके तारोंके सम्बन्धमें हम झगड़ा

करते रहेंगे; परन्तु अपने छप्परका ज्ञान हमें बिल्कुल ही न होगा। आकाशके तारोंकी गिनती कर डालनेका हम विचार करेंगे; परन्तु हमारे छप्परमें क्या है और कितने खपरे हैं, इस बातके जाननेकी हमें इच्छा ही न होगी। हमारी आँखोंके सामने होते हुए कुदरती नाटकका देखना हमें पसन्द न पड़ेगा पर थियेटरोंके ढोंग देखनेको हमारा मन बड़ा ही ललचायेगा। इसी प्रकार हमारे शरीरमें क्या हो रहा है, वह क्या है, किसका बना हुआ है, उसमें हड्डी, मांस, खून वगैरह कैसे बनते हैं, वे सब क्या करते है, शरीरमें बोलनेवाला कौन है, हमारी गति किस कारणसे हो रही है, हममें एकवार अच्छे और दूसरी वार बुरे विचार क्यों उत्पन्न होते है, हमारी इच्छाके विरुद्ध हमारा मन हजारों लाखों मीलतक कैसे दौड़ जाता है, जब कि हमारा शरीर एक चिउँटीकी तरह बड़ा ही धीरे धीरे चलता है तब मन वायुसे भी हजार गुणा वेगवान् क्यों है, इन सब बातोंका हमें बिल्कुल ज्ञान नहीं है। इस प्रकार अत्यन्त समीपवर्त्ति शरीरके साथ हमारा जो सम्बन्ध हो रहा है, उसकी हमें बहुत ही थोड़ी जानकारी है। और वह एक तरह नहींके बराबर है।

इस कठिन दशासे छुटकारा पानेके लिए यत्न करना प्रत्येक जनका कर्त्तव्य है। यद्यपि शरीर और मनके सम्बन्धका जानना सहज नहीं है— बड़ा कठिन है, परन्तु तब भी शरीरकी साधारण बातोंका थोड़ा बहुत ज्ञान होना सबहीके लिए आवश्यक है। यही नही, किन्तु बालकोंकी शिक्षामें भी इस विषयका समावेश होना चाहिए। हमारी उँगली कट जाय और हम उसका कुछ उपाय न जानें, हमारे पाँवोंमें काँटा चुभ जाय और हम उसे न निकाल सकें, सर्प काट खाय और हमें इस बातकी जानकारी न हो कि उस समय निर्भय रहकर हम क्या उपाय करें; ऐसी ही और बहुतसी बातें है, उन पर यदि हम विचार करें तो हमें

सिवा शरमानेके और कुछ न होगा। यह कह देना कि साधारण मनुष्य इस विषयमें कुछ नहीं समझते, केवल मिथ्याभिमान है अथवा मनुष्योंको ठगनेका बुरेसे बुरा प्रपंच है।

यह नहीं कहा जा सकता कि इस प्रकारकी पराधीनता और अज्ञानसे 'इंडियन-ओपिनियन' के पाठक मुक्त होंगे। तब वे थोड़ा बहुत इनके पंजेसे छुटकारा पा सकें, इसी लिए इन लेखोंके लिखनेका प्रयत्न किया गया है। ऐसा नहीं है कि इस प्रकारके लेख लिखे ही न गये हों; परन्तु लोगोंको कोई खास पुस्तक या पत्रके पढ़नेकी आदत पड़ जाती है। इण्डियन-ओपिनियनके पाठकोंको भी अन्य अन्य पत्रोंके साथ इंडियन-ओपिनियनके पढ़नेकी आदतसी पड़ गई है। इस कारण कई पाठक तो आरोग्य-सम्बन्धी पुस्तकोंको पढ़ते ही नहीं हैं। उन्हें इन प्रकरणोंसे लाभ पहुँचना संभव है। सिवा इसके मुझे विश्वास है कि इन लेखोंमें जुदी जुदी पुस्तकोंके जुदे जुदे विचारोंका निचोड़ रहेगा; क्योंकि इन बिषयोंकी कई पुस्तकोंको पढ़कर उनके परस्पर विरोधी विचारों पर मैंने खूब मनन किया है; और उन पर प्रयोग कर—उन्हें ठीक तरह आजमा कर अपने विचार स्थिर किये हैं। इस कारण इस पुस्तको पढ़कर इस विषयमें नये ही नये प्रवेश करनेवाले मनुष्यको फिर अन्य परस्पर विरोधी विचारोंको पढ़कर भी किसी प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना न करना पड़ेगा और वह बड़ी सरलतासे इस विषयको जान सकेगा। एक पुस्तकमें लिखा है कि अमुक स्थितिमें गरम पानी काममें लाना चाहिए और दूसरी पुस्तकमें लिखा है कि ऐसी दशामें ठंडा पानी अच्छा है। नये मनुष्यको इन बातोंको पढ़कर बड़ी कठिनता पड़ेगी—वह कुछ भी स्थिर न कर सकेगा। ऐसे ही और भी अनेक विषय हैं, उन सब पर बुद्धिके अनुसार इन प्रकरणोंमें बिचार रहेगा। इतना होने पर फिर जो मूल पुस्तकोंको पढ़ना चाहेंगे वे

उन्हें पढ़कर उनमें बताये हुए विरोधी उपायोंमें अपनी बुद्धिके अनुसार फेर-फार कर सकेंगे । इस लिए यह लिखना अनुचित न होगा कि इंडियन-ओपिनियनके बहुतसे पाठकोंको ये निबन्ध थोड़े-बहुत रूपमें अवश्य उपयोगी होंगे ।

हम लोगोंकी कुछ ऐसी आदतें पड़ गई हैं, कि जहाँ कहीं हमें जरा भी दर्द हुआ कि हम तुरंत वैद्य, डॉक्टर या हकीमके घर दौड़े जाते हैं। और यदि ऐसा न भी करें तो उस समय हमें अपना पड़ोसी या अन्यकोई जिस दवाके लेनेकी सलाह देता है हम उस दवाको ले लेते है । हमें कुछ ऐसा विश्वास ही होगया है कि बिना दवाके रोग मिट ही नहीं सकता । परन्तु यह एक बड़ा भारी वहम है और इस वहमसे जितने लोग दुखी हुए हैं और होते हैं उतने और कारणोंसे न हुए और न होनेके । मतलब यह कि यदि हम यह समझ जायँ कि दर्द किसे कहते है, तो हमें कुछ समाधानी हो सकती है । दर्दका अर्थ है दुःख और रोगका भी अर्थ ऐसा ही है—इस लिए दर्दके मिटानेका उपाय करना तो योग्य है, पर उसके लिए दवाका उपयोग करना व्यर्थ है । यही नही, किन्तु ऐसा करनेसे बहुत बार नुकसान उठाना पड़ता है । हमारे घरमें कचरा पड़ा हुआ है और हम उसे बाहर फैंक देनेके बजाय ढकदें, तो उसका जैसा असर होगा ठीक वैसा ही असर रोग मिटानेके लिए ली गई दवाका होता है । उस कचरेको जो हमने ढक दिया उसका परिणाम यह होगा कि वह सड़कर हमें हानि पहुँचावेगा । सिवा इसके उस परका ढकन सड़कर कचरा और ज्यादा बढ़ जायगा । तब हमें दुगुने कचरेके निकाल फैंकनेकी चिन्ता करनी पड़ेगी। ठीक ऐसी ही दशा दवा लेनेवालेकी होती है। कचरा ढक देनेके बजाय यदि हम उसे बाहर फैंक दें तो घर पहले जैसा साफ था वैसा ही फिर साफ हो जाय । प्रकृति शरीरमें रोग, कष्ट आदि पैदा कर हमें सूचित करती है कि तुम्हारे शरीरमें कचरा है । प्रकृतिने स्वयं भी कचरे निकालनेके रास्ते शरीरमें रक्खे हैं और जब जब हमारे

शरीरमें कोई रोग या कष्ट हो तो हमें समझना चाहिए कि अब प्रकृतिने शरीरमेंसे कचरा निकाल शुरू किया है । कोई मनुष्य हमारे घरका कचरा निकालने लगता है तो हम उसका उपकार मानते है और जबतक वह कचरा निकालता रहता है तबतक हमें कुछ तकलीफ भी होती है तो हम चुपचाप ही रहते हैं । उसी भाँति प्रकृति जबतक हमारे शरीरमें-से कचरा निकाल कर उसे साफ न करदे तबतक यदि हम चुपचाप रहें–प्रकृतिके विरुद्ध कोई दवा वगैरह न करें तो–हमारा शरीर नीरोग होकर हमें दुःखोंसे छुटकारा मिल जाय । मान लीजिए कि हमें सरदी होगई है, उस समय हमें दवा लेने या सोंठ वगैरहके खानेकी कोई आवश्यकता नहीं है । हमें जानना चाहिए कि हमारे शरीरमें जो कचरा इकट्ठा होगया है उसे बाहर निकाल फैंकनेके लिए प्रकृति आई है । उसे हमें रास्ता देना चाहिए । ऐसा करनेसे हम बहुत थोड़े समयमें साफ–नीरोग हो सकेंगे । यदि उस समय हम प्रकृतिका सामना करनेके लिए खड़े हो तो उसके लिए दुगुना काम बढ जायगा । एक तो कचरा दूर करना और दूसरा हमारे साथ लड़ना । इसके विपरीत यदि हम चाहें तो प्रकृतिको उल्टी सहायता दे सकते है । हमें चाहिए कि जिस कारणसे कचरा इकट्ठा हुआ है उस कारणको ही हम दूर कर दें, जिससे कचरेका बढ़ना रुक जाय । इसके लिए उस समय हमें खाना बन्द कर देना चाहिए । उससे कचरा बढ़ न सकेगा । इसके सिवा खुली हवामें योग्य कसरत करते रहनेसे भी हम कचरेको शरीरके द्वारा निकालते रहेंगे । शरीरको नीरोग रखनेके इस सुनहरी नियमको प्रत्येक मनुष्य अपने आप ही सबूत कर सकता है । परन्तु उस समय हमें अपने मनकी स्थिरता रखना बहुत ही आवश्यक है । जिस मनुष्यकी ईश्वर पर सच्ची श्रद्धा है वह तो हमेशा ऐसा करेगा ही । मनको स्थिर करनेमें ये विचार बहुत ही सहायक होंगे कि ऐसा कोई बीमा नहीं उतार सकता जो वैद्य या

हकीमोंकी दवा लेनेसे मेरा रोग दूर हो ही जायगा; क्यों कि उनकी दवा लेनेवाले भी बहुतसे नीरोग होते नहीं देखे जाते । और यदि ऐसा होता हो तो फिर इन प्रकरणोंके लिखनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती; और हम सब बड़े सुखसे जिन्दगीको भोगते हुए नजर आते ।

अनुभव तो यह कहता है कि जहाँ एकवार हमारे घरमें श्रीबोतल देवीका प्रवेश हुआ कि फिर वे उस घरसे बाहर निकलती ही नहीं । असंख्य मनुष्य ऐसे देखे जाते हैं जो जिन्दगी भर कोई न कोई रोगसे रोगी रहते ही है और फिर वे एकके बाद एक दवा बढ़ाते ही जाते हैं । वे प्रति दिन वैद्य या हकीमोंको बदला करते है और रोग मिटा देनेवाले वैद्यकी तलाशमे निरंतर घूमा करते है; और अन्तमें स्वयं ख्वार होकर तथा औरोंको ख्वार कर तड़फ तड़फ कर मर मिटते हैं । स्व० प्रसिद्ध जजस्टीवन हिंदुस्तानमें रह गये है । उन्होंने एकवार कहा था कि " जिन वनस्पतियोंके सम्बन्धमें वैद्य लोगोंको बहुत थोड़ा ज्ञान है उन्हीं वनस्पतियोंको वे ऐसे शरीरमें पहुँचाते हैं जो शरीर उन वनस्पतियोंका ज्ञान उन वैद्योंसे भी बहुत थोडा रखता है । वैद्य लोगोंको जब इस बातका पूरा पूरा अनुभव हो जाता है तब वे भी इसी भाँति कहने लगते हैं। " डाक्टर मेजेन्दीने कहा है कि " वैद्यक महा पाखण्ड है । " सर अेस्टली एक प्रसिद्ध डाक्टर होगया है । उसने लिखा है कि "वैद्यकशास्त्र केवल अटकल पर रचा गया है । " सर जॉन फोरबझने कहा है कि " अच्छे वैद्योंके रहने पर भी बहुतसे मनुष्योंको कुदरतने ही नीरोग किया है । " डाक्टर बेकरका कहना है कि " लाल बुखारसे जितने रोगी मरते हैं उससे अधिक रोगी उसकी दवासे मरते हैं । " डाक्टर फरोथ कहते हैं कि " वैद्यककी अपेक्षा अधिक अप्रामाणिक धंधा भाग्यसे ही देख पड़ेगा । " डाक्टर टोमस वोटसन कहते हैं कि " बहुतसे ऐसे आवश्यक प्रश्न है

जिनका उत्तर हमारा डाक्टरी धंधा नहीं दे सकता।" डाक्टर फ्रेंकका कहना है कि "इन दवाखानोंके द्वारा हजारों मनुष्योंकी हत्या होती है।" डाक्टर मेसन गुड कहते हैं कि "प्लेग, हैजा, महामारी आदिसे जितने लोग मरते हैं उनसे अधिक मनुष्य इन दवाओंकी बलि चढ़ते हैं।" यह बात हम जगह जगह देखते हैं कि जहाँ जहाँ वैद्योंकी वृद्धि हुई है वहाँ वहाँ रोग कम होनेके बजाय अधिक अधिक बढ़े हैं। जिन पत्रोंको और और विषयोंके विज्ञापन नहीं मिलते उन्हें दवाओंके बड़े बड़े विज्ञापन सहजमें मिल जाते हैं। इंडियन-ओपिनियनमें जब विज्ञापन लिये जाते थे और उसके संचालक गण जब लोगोंके पास विज्ञापन लेनेको जाते तब दवा बेचनेवाले उसमें दवाओंका विज्ञापन छापनेके लिए बड़ा आग्रह करते और उसका चार्ज भी भरपूर देनेका लालच दिखलाते। जिस दवाकी कीमत एक पाई होती है उसका हम एक रुपया देते हैं। यदि ऐसी दवाओंके बनालेनेकी हम कोशिश करना चाहें तो उसके बनानेवाले हमें इस बातका पता भी नहीं पड़ने देते कि वह दवा किस तरह बनाई जाती है। "छिपी दवायें" नामकी एक पुस्तक एक डाक्टरने इस अभिप्रायसे प्रकाशित की है कि उसे पढ़कर लोग भ्रममें न पड़ें। उसमें उन्होंने लिखा है कि सालसा-परीला, फ्रूट-सॉल्ट, सिरप वगैरह पेटेन्ट दवायें हैं। इनकी कीमत हम लोग सवा दो रुपयेसे लेकर सवा पॉच रुपयेतक देते हैं; परन्तु इन दवाओंकी मूल कीमत एक पैसेसे लेकर चार पैसे तक होती है। इसे फैलाकर देखें तो हम लोग कमसे कम छत्तीस गुणी और अधिकसे अधिक तीनसौ छत्तीस गुणी कीमत देते हैं। मतलब यह कि इस हालतमें हम लोग तीन हजार पाँचसौ टकेसे पैंतीस हजार टकेतकका नफा देते हैं।

इससे पाठक इतना तो विचार सकेंगे कि रोगियोंको न तो डाक्टरों या वैद्योंके यहाँ दौडे जानेकी आवश्यकता है और न एकदम दवा लेनेकी; परंतु

दुःख है कि प्रायः लोग इतनी धीरज नहीं रखते। साधारण लोग यह नहीं मान सकते कि सब ही डाक्टर अप्रामाणिक–अविश्वासी होते हैं और न सब दवायें ही खराब होती हैं। ऐसे लोगोंके लिए इतना कहना आवश्यक जान पड़ता है कि "तुमसे जहाँतक बन पड़े धीरज रखना। डाक्टरों या वैद्योंको जहाँतक हो कष्ट न देना। डाक्टर वगैरहको बुलाना ही आवश्यक जान पड़े तो किसी अच्छे समझदार अनुभवीको बुलाना और उसीके कहे अनुसार चलना। दूसरे डाक्टर या वैद्योंको तभी बुलाना जब कि पहला डाक्टर तुम्हें अन्यके बुलानेकी सलाह दे। तुम्हारा रोग तुम्हारे डाक्टरके हाथमें नहीं है। तुम्हारी आयु ज्यादा होगी तो तुम अवश्य आरोग्य लाभ करोगे और तुम्हारे प्रयत्न करते रहने पर भी यदि तुम्हारी या तुम्हारे सगे-सम्बन्धीकी मौत हो जाय तो समझना कि यह भी एक जिन्दगीका फेर-फार ही है।"

इन निबन्धोंके लिखनेका यही कारण है कि पाठक इनमें आये हुए शरीर-रचना, हवा, पानी, खुराक, कसरत, कपड़े, पानी और मिट्टीके उपचार, अकस्मात्-विपत्ति, बच्चोंकी सम्हाल, गर्भके समय स्त्री-पुरुषोंका कर्त्तव्य और साधारण रोग आदि विषयोंके सम्बन्धमें खूब विचार और मनन कर उन्हें उपयोगमें लानेका यत्न करें।

अनुवादक—

उदयलाल काशलीवाल।

तरह यदि कोई पुष्प गुलाबके पुष्पके समान देख पड़ता हो, परन्तु बदबू-करता हो–दुर्गन्ध आती हो, तो हम उसे फेंक देंगे; वैसे ही, मनुष्यका शरीर सुन्दर देख पड़ता हो और मनुष्य असच्चरित्र हो, तो हम उसके शरीर पर मोहित न होंगे। हम कह सकते हैं कि जिस मनुष्यका चरित्र अच्छा नहीं है वह नीरोग नहीं गिना जा सकता। शरीर और आत्माका ऐसा दृढ़ सम्बन्ध है कि जिसका शरीर अच्छा होगा उसका मन भी शुद्ध होगा। इसी सिद्धान्तके आधार पर योरपमें एक सम्प्रदाय चल पड़ी है। उसका मानना है कि जिसका मन शुद्ध है उसे कोई रोग होगा ही नहीं, और जो बीमार है वह भी शुद्ध मन रखकर शरीरसे नीरोग हो सकता है। यह मत छोड़ देने योग्य नहीं है–सच्चा है। परन्तु पश्चिमीय सुधारक इस मतका दुरुपयोग करते है। हमें तो इसमेंसे इतनासा सार मात्र ग्रहण कर लेना है कि आरोग्य सम्पादन करनेका प्रधान साधन मन है और मनकी शुद्धि आरोग्यको निभानेकी मुख्य वस्तु है।

यह मनुष्य क्रोधी है, इसकी प्रकृति तामस है, वह आलसी है, वह बहरा है, सच पूछो तो ये सारे रोगके चिह्न है। कितने ही डाक्टरोंका तो कहना है कि चोरी आदि दुर्गुण भी बीमारी है। कितनी ही धनाढ्य स्त्रियाँ विलायतकी दूकानोंसे कुछ चीजोंको चुरा लेती है। विलायतके डाक्टर इस स्थितिको 'क्लेप्टे मेनिया' नामकी बीमारी बतलाते हैं। कितने ही मनुष्य जबतक मारकाट न करें तबतक उन्हें चैन नहीं पड़ती। यह भी रोग ही है।

इस प्रकार विचार करते हुए हम उसी मनुष्यको नीरोग–तन्दुरुस्त कह सकते हैं कि जिसके शरीरमें कुछ कमी नही है–शरीर अभंग हैं, दाँत ठीक है, आँख-कान दुरुस्त है, नाक नही बहता, जिसकी त्वचासे प्रस्वेद निकलता है किन्तु बदबू नही मारता, जिसके पैर गंदे नही है, मुँह नहीं सड़ता, हाथ-पैर साधारण तौर पर काम कर सकते है, जो विषयासक्त

आरोग्य-दिग्दर्शन।

(पूर्वार्द्ध)

१ आरोग्य।

सर्वसाधारण यह समझते हैं कि मनुष्य खूब खाता-पीता हो, अच्छी तरह चलता-फिरता हो और वैद्य या डाक्टरोंके यहाँ न जाता हो तो वह नीरोग है। परन्तु थोड़ासा विचार करनेसे हमें जान पड़ेगा कि ऐसा मानना भूल है। अनेक दृष्टान्त ऐसे देख पड़ते है कि मनुष्य खाते-पीते और चलते-फिरते हुए भी रोगी हैं, पर वे रोगकी परवा न कर मान लेते हैं कि हमें कुछ नहीं है—हम नीरोग है।

सच बात तो यह है कि सर्वथा नीरोग मनुष्य इस संसारमें बहुत ही कम मिलेंगे।

एक अंग्रेज लेखकका कहना है कि वही मनुष्य नीरोग कहा जा सकता है कि जिसके शुद्ध शरीरमें मनकी शुद्ध स्थिति हो। मनुष्य केवल शरीरका ही बना नहीं है। शरीर तो उसके रहनेका स्थान है। शरीर, मन और इन्द्रियोंका ऐसा गहरा सम्बन्ध है कि एकको व्याधि हुई तो दूसरा भी बिगड़ जायगा। शरीरको गुलाबके पुष्पकी उपमा दी जाती है। गुलाबके पुष्पका ऊपरी दिखाव शरीर है और सौरभ आत्मा है। कागजके बने हुए गुलाबके फूलको कोई पसंद नहीं करता। उसे सूँघनेसे गुलाबकी सुगन्ध नहीं आ सकती। गुलाबकी परीक्षा ही उसकी सुगन्ध है। इसी तरह मनुष्यकी सुगन्ध उसके आत्माका चरित्र है—यही मनुष्यकी परीक्षा है। इसी

नहीं है, न बहुत मोटा है, न बहुत दुबला, और मन तथा इन्द्रियाँ जिसके सदा अधीन बनी रहती है । ऐसा आरोग्य सम्पादन करना और उसकी रक्षा करना सहज बात नही है । हम ऐसे आरोग्यको नहीं भोग रहे हैं, क्योंकि हमारे माँ-बाप भी उसे नही भोगते थे । एक महान लेखकने लिखा है कि यदि माँ-बाप सब प्रकारसे योग्य हों तो उनकी सन्तति उनसे बढ़कर होनी चाहिए । यदि यह बात न हो तो, दुनियाँ उन्नत हो रही है, इस विचारके माननेवालोंको अपनी बात छोड़नी पड़ेगी । जो मनुष्य, पूरा नीरोग है उसे मौतका कोई भय नहीं होता । हम मौतसे डरते हैं, यही डर तो बताये देता है कि हम नीरोग नहीं है । मौत तो हमारे जीवनका एक बड़ा भारी फेरफार है, और सृष्टि-नियमके अनुकूल वह फेरफार उत्तम ही होना चाहिए । ऐसे उत्तम आरोग्यको सम्पादन करनेके लिए प्रयत्न करना हमारा कर्तव्य है । हम आगे चलकर इस बातका विचार करेंगे कि ऐसा आरोग्य कैसे प्राप्त किया जा सकता है, और कैसे उसकी रक्षा हो सकती है ।

२ हमारा शरीर।

पृथ्वी, पानी, पवन त्यों, तेज और आकास।
हैं पाँचों ही तत्त्व ये, इनका जगत विकास॥

बहुत करके शरीरका वर्णन ऊपर लिखे दोहेमें आ जाता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँचों तत्त्वोंको मिलाकर, जो खेल प्रकृतिने और प्रकृतिके कर्ताने किया है, उसे हम जगत्के नामसे जानते हैं। जिन वस्तुओंसे जगत् बना हैं उन्हींसे यह मिट्टीका पुतला, जिसे हम शरीर कहते हैं, बना है। हम लोगोंमें कहावत प्रचलित है कि 'यथा पिंडे तथा ब्रह्माण्डे'। यदि हम इसे अच्छी तरह समझलें तो ध्यानमें आये बिना न रहेगा कि शरीरको रखनेके लिए, स्वच्छ मिट्टी, स्वच्छ जल, स्वच्छ (खुला) आकाश, स्वच्छ तेज (सूर्य) और स्वच्छ वायु आवश्यक हैं। इनमेंसे हमें किसी तत्त्वसे नहीं डरना चाहिए। वास्तवमें देखा जाय तो इनमेंसे जिस तत्त्वकी हममें कमी होगी और जिस परिमाणमें होगी, उतना ही रोग होगा। शरीरके विषयमें इतने ही जाननेकी आवश्यकता है, परन्तु हमारे प्रतिपाद्य विषयके लिए इतना ही जानना पूर्ण नहीं है।

शरीर हाड़, मांस, त्वचा और रुधिरसे बना है। शरीरका मुख्य आधार हाड़-पिंजर पर है। इसीके आधारसे हम खड़े हो सकते हैं और चल-फिर सकते हैं। हड्डियाँ शरीरके कोमल अवयवोंकी रक्षा करती हैं। खोपड़ी, दिमागकी रक्षा करती है और पसलियाँ, हृदय और फैफड़ोंकी। डाक्टरोंकी गिनतीके मुआफिक हमारे शरीरमें २३८ हड्डियाँ हैं। हड्डियोंका बाहरी विभाग कठिन होता है इस बातको हम सब देख सकते हैं। परन्तु भीतरी विभागकी ऐसी स्थिति नहीं है। वह पोला और नरम

होता है। एक हड्डी दूसरी हड्डीसे जुड़ी हुई रहती है। जोड़की जगह मज्जाका आवरण होता है। इस मज्जाको एक तरहकी नरम हड्डी ही कह सकते हैं।

हमारे दाँत भी हड्डियाँ ही हैं। बचपनमें जो दाँत आते हैं वे दूधिया दाँत कहलाते हैं। वे सबके सब गिर जाते हैं। इसके बाद दूसरे दाँत आते है। इनके गिर जाने पर फिर दाँत नहीं आते। बालकके दूधिया दाँत छहसे आठ महीनेकी अवस्थामें निकलने लगते हैं और बच्चा दो-अढ़ाई वर्षका होता है तबतक निकल चुकते हैं। दूसरे दाँत पाँच वर्षके बाद निकलने लगते है और १७–२५ वर्षकी अवस्था तक निकल चुकते हैं। दाढ़ें सब दाँतोंके बाद निकलती हैं।

त्वचाको स्पर्श करनेसे हमें कई जगह मांस-पिंडसे जान पड़ेंगे। ये स्नायु कहाती हैं। इनके द्वारा हमारे ज्ञान-तन्तु काम लेते हैं। हम मुट्ठी बाँध सकते है और खोल सकते हैं, आँखें टिमटिमा सकते है और जबड़ोंको हिला सकते हैं ये सब स्नायुओंके आधार पर होता है।

शरीर-सम्बन्धी सारी बातोंका परिचय देना इन प्रकरणोंकी मर्यादाके बाहर है और न लेखकको ही उनका पूर्ण ज्ञान है। यहाँ पर मतलबके लिए जितना आवश्यक है उतना ही परिचय दिया जायगा। अर्थात् ऊपरकी बातें लिखे बाद हम शरीरके मुख्य मुख्य भागोंका वर्णन करते है। इन मुख्य भागोंमें कोठा सबसे बढ़कर है। यदि क्षणभरके लिए भी कोठा आलस करे तो हमारी रग रग ढीली पड़ जाय। जितना भार हम कोठे पर डालते हैं उतना भार सहन करनेकी शक्ति महा विकराल प्राणियोंमें भी नहीं है। कोठेका काम अन्नको पचाने और पचे हुए अन्नके द्वारा शरीर-पोषण करनेका है। साँचेको चलानेके लिए जैसे एंजिन होता है वैसे ही मनुष्यके लिए कोठा है। यह बायीं ओर पसलियोंके बीचमें है।

इसमें अनेक क्रियाओं द्वारा अलग अलग रस तैयार होकर अन्नमेंका तत्त्व खींचा जाता है और निस्सार भाग .मल-मूत्र बनकर अँताड़ियोंके द्वारा बाहर निकल जाता है। इसके ऊपरकी ओर कलेजेका वाम भाग है। कोठेकी बायीं ओर तिल्ली है। पसलियोंके भीतर दायें भागमें कलेजा है। खूनको साफ करना और पित्तको पैदा करना कलेजेका काम है। यह पित्त पाचन-क्रियाके उपयोगमें आता है।

पसलियोंके नीचे—सीनेकी पोलाईमें अन्तःकरण, रक्ताशय और फैफड़े हैं। अन्तःकरणकी थैली दोनों फैफड़ोंके बीचमें बायीं ओर है। सीनेमें, बायीं और दायी ओर मिलकर २४ हड्डियाँ हैं। पाँचवीं और छठी पसलीके बीचमें अन्तःकरणका धबकारा होता है। हमारे बायें और दायें फैफड़े श्वास-नलीसे जुड़े है। उनमें हवा भरी जाकर खून साफ होता है। फैंफड़ोंमें श्वास-नलीके द्वारा हवा जाती है। यह हवा नाकके द्वारा जानी चाहिए। नाकके द्वारा जो हवा जाती है वह गरम होकर फैंफड़ोंमें पहुँचती है। बहुतसे मनुष्य इस बातको न जानकर मुँहके द्वारा हवाको भीतर पहुँचाते हैं और हानि उठाते हैं। मुँह खाने-पीनेके कामका है, इस कामका नही। हवा नाकके रास्तेसे ही जानी चाहिए।

हमें शरीरकी रचना और उसके मुख्य भागका कुछ कुछ ज्ञान होगया। अब हमें, सारे देहका आधार जिस पर है उस प्रवाही रक्तके विषयमें भी कुछ ज्ञान सम्पादन करना आवश्यक है। रक्त हमारे शरीरका पोषण करता है और वह खुराकमेंसे पोषण करनेवाले भागको अलहदा करता है। निरुपयोगी वस्तुको—मल-मूत्रको बाहर निकालता है और शरीरको एकसा गरमीमें रखता है। रक्त शरीरमेंकी नलियों—नसों द्वारा सदा फिरता रहता है। हमारी नाड़ियाँ रक्तकी गतिके कारण ही चलती हैं। जवान और नीरोग मनुष्यकी नाड़ी एक मिनिटमें लगभग ७५ दफे चलती है। बच्चोंकी जल्दी चलती है और बूढ़ोंकी कम।

रक्तको शुद्ध करनेका बड़ेसे-बड़ा साधन पवन है। शरीरमें चक्कर-लगाकर जो रक्त फैफड़ोंमें जाता है वह निकम्मा हो जाता है और उसमें विषैले पदार्थ होते हैं। इन विषैले पदार्थोंको, फैंफड़ोंमें जो हवा श्वास द्वारा जाती है वह ग्रहण कर लेती है और अपनेमें रहनेवाले प्राण-तत्त्वको रक्तमें छोड़ देती है। यह क्रिया होती ही रहती है। रक्तके विषैले पदार्थको लेकर भीतर गई हुई हवा उच्छ्वासके द्वारा बाहर आ जाती है। रक्तमें जो प्राण-तत्त्व मिलता है वह रक्तके साथ सारे शरीरमें फैल जाता है। इस बातसे ध्यानमें आ सकता है कि उच्छ्वासके द्वारा निकली हुई हवा कैसी विषैली होती है। हवाका हमारे शरीर पर इतना ज्यादा प्रभाव पड़ता है कि उसका विचार हम अलग ही प्रकरणमें करेंगे।

हवा।

हम शरीरकी रचनाका कुछ विवेचन कर चुके हैं। उससे हमें यह जान पड़ा कि शरीरको तीन प्रकारकी खुराककी आवश्यकता है। हवा, पानी और अन्न। इनमें सबसे ज्यादा आवश्यक वस्तु हवा है। प्रकृतिने हवा इतनी ज्यादा रक्खी है कि वह हमें मुफ्त मिलती है। ऐसा होने पर भी वर्तमानके सुधारने हवाको कीमती कर दिया है। वर्तमान समयमें हमें हवाके लिए दूर दूरके देशोंमें जाना पड़ता है और दूर जानेमें पैसे खर्च होते हैं। बंबईके रहनेवालोंको माथेरनमें हवा खानेके लिए रहनेको मिले तो प्रकृति सुधरती है और बंबईमें ही मलबार हिल पर रहना बन सके तो अच्छी हवा मिलती है। परन्तु ऐसा करनेके लिए टके चाहिए। डरबनमें रहनेवालेको अच्छी हवा पाना हो तो उसे बेरियाको जाना चाहिए। इस कामको बिना पैसेके पूर्ण नहीं किया जा सकता। अतएव आजकलके जमानेमें हवा मुफ्त मिलती है यह कहना सर्वथा उचित नहीं गिना सकता।

हवा मुफ्त मिले या मोलसे परन्तु इसके बिना हम घड़ी भर भी निर्वाह नहीं कर सकते। हम कह चुके हैं कि रक्त सारे शरीरमें फिरता है। वह फेफड़ोंमें आकर स्वच्छ होता है और पीछा फिरता है। यह क्रिया हमारे शरीरमे दिनरात होती रहती है। साँस बाहर निकाल कर हम विषैले पवनको बाहर निकालते है और साँस लेकर हम बाहरकी हवाके प्राण-वायुको भीतर पहुँचाते हैं और उसके द्वारा रक्तको स्वच्छ करते हैं। यह श्वासोच्छ्वास होता रहता है और इसके ऊपर शरीरकी जिन्दगीका आधार है। मनुष्य पानीमें डूबकर मर जाता है इसका अर्थ इतना ही है कि वह प्राण-वायुको शरीरमें नहीं पहुँचा सकता और भीतरी विषैले पवनको बाहर नहीं निकाल सकता। डुबकी लगानेवाले बख्तर पहन कर पानीमें उतरते हैं और पा-

नोंके बाहर निकली हुई नलीके द्वारा उन्हें बाहरकी हवा पहुँचती रहती है, इससे वे बहुत समय तक पानीमें रह सकते है।

कितने ही वैद्योंके प्रयोगोंसे साबित हुआ है कि यदि मनुष्यको हवाके बिना रक्खा जावे तो पाँच मिनिटमें उसके प्राण निकल जायँगे। कितनी ही वार मॉकी रजाईमें लिपटा हुआ बच्चा घुटकर मर जाता है। यह मृत्यु बालकके नाक और मुँहके बँद हो जानेके कारण बाहरकी हवा न मिलनेसे होती है।

इन बातोंसे हम समझ सकते हैं कि हवा हमारी सबसे आवश्यक खुराक है और वह हमें बिना माँगे मिलती है। पानी और अन्न हमें माँगने और तलाश करनेसे मिलते है; परन्तु हवा तो हमें इच्छा किये बिना भी मिलती रहती है।

जैसे हम खराब पानी और खराब अन्न ग्रहण करते हुए हिचकिचाते है वैसे ही हमें हवाके सम्बन्धमें भी ध्यान रखना चाहिए। परन्तु हम जितना खराब अन्न-जल नहीं लेते उतनी खराब हवा लेते हैं। यह देखनेकी ही कमी है। हम मूर्त्तिमान वस्तुको ही देखते हैं। हवा आँखोंसे नहीं देख पड़ती, इससे हम इस बातका विचार नही करते कि हम कितनी खराब हवा लेते है। दूसरोंके जूठे अन्न-जलको हम नहीं खाते-पीते और हमें नफरत न भी हो तो भी ऐसे अन्न-जलको हम कभी न लेंगे। अकालके मारे मनुष्यके साम्हने भी ऐसी खुराक रक्खी जाय तो वह मरना पसन्द करेगा पर उस खुराकको न लेगा। परन्तु दूसरोंकी कै की हुई-उच्छ्वासके द्वारा बाहर निकाली हुई, हवाको हम सब, बिना किसी प्रकारकी नफरतके ग्रहण करते हैं। आरोग्य-शास्त्रके नियमोंके मुआफिक यह हवा भी उस अन्न-जलके समान खराब ही है। ऐसा साबित किया गया है कि एक मनुष्यका उच्छ्वास दूसरे मनुष्यके फेंफड़ेमें दाखिल कर दिया जाय तो उस दूसरे मनुष्यका तुरंत ही मरण हो जायगा। उच्छ्वास ऐसा विषैला

है तो भी उसे एक कोठरीमें ठसाठस बैठे हुए या सोते हुए मनुष्य ग्रहण करते रहते है। मनुष्यका सौभाग्य है कि हवा ऐसा चंचल पदार्थ है कि वह सदा चलता रहता है और सब ठौर फैल जाता है। इतना ही नहीं, बारीकसे बारीक छिद्रोंमेंसे वह प्रविष्ट हो जाता है। एक ओर कोठरीमें इकट्ठे होकर हम हवाको खराब करते है और दूसरी ओर दरवाजोंकी सन्धियों और छप्परके छिद्रोंमेंसे थोड़ी बहुत बाहरकी हवा आती रहती है। उससे हम बिल्कुल उच्छ्वासकी ही हवाको पीछी नहीं लेते पर हमारी बाहर निकाली हुई हवा भी निरंतर शुद्ध होती रहती है। खुली हवामें हम उच्छ्वास लेते हैं तो वह क्षणभरमें बाहरकी हवामें फैल जाता है और उत्तम हवाकी जो मिकदार (परिणाम) है उसे कुदरत रख लेती है। हवा बहुत बड़े विस्तारमें इस छोटीसी पृथ्वकि चारों ओर फैली हुई है।

अब हम समझ सकते हैं कि बहुतसे मनुष्य निर्बल और बीमार क्यों रहा करते हैं। जहाँतक देखा गया है सौमें निन्यानवेकी बीमारीका कारण खराब हवा है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। क्षय, बुखार और अनेक प्रकारके जो छूतके रोग है उन सबका कारण हमारी ली हुई खराब हवा है। अतएव इन रोगोंको दूर करनेका पहला और अन्तिम सहज उपाय यही है कि हम अच्छीसे अच्छी हवाको लें। इस उपायको दुनियाँ भरमें कोई वैद्य, डाक्टर, या हकीम नही पहुँच सकता। क्षय-रोग फैंफड़े सड़नेकी निशानी है और फैंफड़ा सड़ता है विषैली हवाको लेकर। जैसे एंजिनमें खराब कोयले भरनेसे वह खराब हो जाता है वैसे ही खराब वायुके भरनेसे फैफड़े खराब हो जाते हैं। इससे समझदार डाक्टर क्षयके रोगीको चौवीसों घंटे खुली हवामें रखनेका पहला उपाय करते हैं। अन्यान्य उपाय वे इसके बाद करते हैं।

फैंफड़ोंके द्वारा हम हवाको ग्रहण करते है, इतना ही नहीं, कुछ कुछ त्वचाके द्वारा भी उसे लेते हैं। त्वचामें जो असंख्य

सूक्ष्म छिद्र हैं, उनके द्वारा भी हम हवाको लेते हैं । जो ऐसी बड़ी भारी आवश्यक वस्तु है उसे स्वच्छ कैसे रक्खा जाय इस बातको जानना प्रत्येक मनुष्यका काम है । वास्तवमें देखा जाय तो बच्चा समझदार हो तभीसे उसे हवाकी आवश्यकताका ज्ञान करा देना चाहिए। इन प्रकरणोंके पढ़नेवाले इस सहज परन्तु अत्यन्त आवश्यक कामको करेंगे और स्वयं हवा-सम्बन्धी सामान्य ज्ञान सम्पादन कर उसके मुआफिक चलते हुए, अपने बाल-बच्चोंको भी सब बातें समझाकर उसी भाँति चलानेका यत्न करेंगे तो मैं अपनेको कृतार्थ समझूँगा ।

हमारे पाखाने, हमारे बाड़े, और, जहाँ पेशाब घर न हो वहाँ पेशाब करनेके स्थान ये हवा खराब होनेके प्रधान साधन हैं । बहुत ही कम मनुष्य ऐसे है जिन्हें पाखानेकी गंदगीसे होते हुए नुकसानका भान हो। कुत्ते बिल्ली जब पाखाना फिरते हैं तब बहुत करके वे अपने पंजोंसे जमीनको खोदते हैं और उस गढ्ढेमें मल त्याग कर उस पर धूल पूर देते हैं । जहाँ पर सुधरे हुए ढंगके पानीके नलवाले पाखाने नहीं हैं वहाँ पर ऊपर लिखे मुआफिक काम करनेकी जरूरत है । हमें अपने पाखानोंमें एक हौज राख या सूखी मिट्टीसे भर रखना चाहिए; और जब जब हम पाखाने जावें तब तब हमें मैलेको राख या सूखी मिट्टीसे अच्छी तरह पूर देना चाहिए । इससे बदबू नही फैलती और मक्खी मछर वगैरह उड़नेवाले जीव मैले पर बैठकर हमारे शरीरको नहीं छूते । जिनके नाक खराब नहीं हुए, या, मैलेकी दुर्गंध सहनेकी आदत नहीं होगई, वे मनुष्य अच्छी तरह जान सकते हैं कि मैला खुला रखनेसे हवामें कैसी बदबू फैलती है । हमारे खानेमें अगर कोई मैला मिलाकर हमारे साम्हने रक्खेगा तो हमें कै हो जायगी; परन्तु हम मैलेकी बदबूसे भरी हुई हवाको श्वासके द्वारा खाते रहते हैं । सच बात तो यह है कि ऐसी हवा और मैला मिले हुए खानेमें कुछ फर्क नहीं है । हाँ, फर्क है तो इतना ही कि मैला

मिले हुए खानेको हम आँखसे देख सकते हैं और हवामें मिले हुए मैलेको नहीं देख सकते । पाखानेकी बैठक-मोरी वगैरह बिल्कुल साफ रखनी चाहिए । अफसोस है कि ऐसा काम करनेसे हम शर्माते हैं—घृणा-करते हैं; परन्तु वास्तवमें देखा जाय तो हमें वैसे पाखाने काममें लानेकी घृणा होनी चाहिए । जो मैला हमारे शरीरसे निकलता है उसे हम दूसरे मनुष्योंके द्वारा उठवाते हैं ऐसा न कर हमें स्वयं क्यों न साफ करना चाहिए ? ऐसा करना कुछ बुरा नहीं है । यह बात स्वयं हमें सीखकर अपने बच्चोंको सिखानी चाहिए । मोरी जब भर जावे तब मलको दो-एक फुटके गहरे गढ़ेमें गाड़ कर ऊपरसे खूब धूल पूर देनी चाहिए । यदि हमें जंगलमें पाखाने जानेकी आदत हो तो मकानोंसे बहुत दूर अच्छी जगह जाना चाहिए । वहाँ हाथसे एक छोटा गढ़ा खोदकर मल त्याग करना चाहिए और खोदी हुई मिट्टी उस पर पूर देनी चाहिए । जहाँ तहाँ पैशाब करके भी हम हवाको खराब करते हैं । इस आदतको बिल्कुल छोड़नी चाहिए । जहाँ पर पैशाब घर न हों वहाँ पर घरोंसे दूर जाकर सूखी जमीनमें पेशाब करना चाहिए और उस पर धूल डालनी चाहिए । मलको ज्यादा गहराईमें नहीं गाड़नेके दो प्रबल कारण हैं । एक तो यह कि मल गहराईमें गाड़नेसे उस पर सूर्यताप काम नहीं कर सकता और दूसरे उसके आस-पासके पानीके झरोंको हानि पहुँचना संभव है ।

बिना विचारे जहाँ तहाँ थूँक देना भी अच्छा नहीं है । कई वार थूँक जहरी होता है । क्षयके रोगीका थूँक बहुत ही जहरीला होता है । उसके जंतु उड़कर श्वास द्वारा दूसरोंमें प्रवेश कर जाते है और उन्हें नुकसान पहुँचाते हैं । जहाँ तहाँ थूँक देनेसे वे स्थान खराब होते हैं यह तो बात ही दूसरी है। इस विषयमें हमारा कर्तव्य यह है कि हमें घरोंके भीतर तो जहाँ तहाँ थूँकना ही न चाहिए । एक पीकदानी रखनी

चाहिए—फिर वह मिट्टीकी कुल्हिया ही क्यों न हो और यदि रास्ते चलते हुए थूँकनेकी जरूरत जान पड़े तो जहाँ पर सूखी हुई जमीनमें खूब धूल जान पड़े वहा थूँकना चाहिए। इससे थूँक सूखी मिट्टीमें मिल जायगा और कम हानि पहुँचावेगा। कितने ही वैद्योंकी तो सम्मति यह है कि क्षयके रोगियोंको तो ऐसे बर्तनोंमें थूँकना चाहिए जिनमें जन्तु-नाशक दवा डाली हो; क्योंकि ऐसे बीमारके थूँकके जंतु सूखी जमीनकी धूलमें मर नही जाते। वह धूल उड़कर हवामें जाती है और उन जंतुओंको फैलाती है। यह बात सही हो या नहीं, परन्तु इससे हम इतना तो समझ सकते हैं कि जहाँ तहाँ थूँकनेकी आदत गंदी और नुकसान करनेवाली है।

सड़ा अनाज, तुस और शाककी पत्तियोंको कई लोग यों ही इधर उधर फैक देते हैं। यदि इन्हें जमीनमें थोड़ीसी गहरी गाड़दें तो हवा खराब न हो और समय पाकर उपयोगी खात तैयार हो जाय। सड़नेवाली कोई भी चीज खुली हवामें न फैकना चाहिए। हर एक मनुष्य अपने अनुभवसे समझ सकेगा कि समझे बाद इन सूचनाओं पर चलना बिल्कुल आसान हैं।

हमारी कुटेवोंसे हवा कैसे खराब होती है और उसे खराब होनेसे कैसे बचाया जा सकता है, यह बात हम जान चुके। अब हम इस बातका विचार करते हैं कि हवा कैसे ली जावे।

हम पहले प्रकरणमें लिख आये हैं कि हवा लेनेका मार्ग नाक है—मुँह नहीं। ऐसा होने पर भी बहुत ही कम ऐसे मनुष्य है जिन्हें श्वास लेना आता हो। बहुतसे जन मुँहसे श्वास लेते हुए भी देखे जाते हैं। यह टेव नुकसान करती है। बहुत ठंडी हवा जो मुँहसे ली जाय, तो प्रायः सरदी हो जाती है, स्वर बैठ जाता है, हवाके साथ धूलके कण श्वास लेनेवालेके फैफड़ोंमें घुस जाते हैं और फैंफड़ोंको बड़ा नुकसान पहुँचाते हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव

विलायतके शहरोंमें तुरंत पड़ता है। वहाँ पर बहुतसे कल-कारखानोंके कारण नवम्बर मासमें बहुत ही फौग -पीली धूमस होती है। उसमें बारीक बारीक काले धूलके कण होते हैं। जो मनुष्य इस धूलके कण-भरी हवाको मुँहसे लेते है उनके थूकमें वह देखनेमें आती है। ऐसा अनर्थ न होनेके लिए बहुतसी स्त्रियाँ-जिन्हें नाकसे श्वास लेनेकी आदत नहीं होती, चेहरे पर जाली बाँध रहती है। यह जाली चलनीका काम देती है। इसमें होकर जो हवा जाती है वह साफ जाती है। इस जालीको काममें आये बाद देखा जाय तो उसमें धूलके कण मिलते हैं। ऐसी ही चलनी परमात्माने हमारे नाकमें रक्खी है। नाकसे ली हुई हवा गरम होकर भीतर उतरती है। इस बातको ध्यानमें रख कर प्रत्येक मनुष्यको नाकके द्वारा ही हवा लेना सीखना चाहिए। यह कुछ मुश्किल नहीं है। न बोलते समय मुँह बंद रखना चाहिए। जिन्हें मुँह खुला रखनेकी आदत पड़ गई हो उन्हें मुँह पर पट्टी बाँध कर रातमें सोना चाहिए। इससे लाचार उन्हें नाकसे ही श्वास लेना पड़ेगा। प्रातःकाल खुली हवामें भी उन्हें २०-२२ वार लम्बी-गहरी साँसें नाकके द्वारा लेनी चाहिए। तन्दुरुस्त और नाकसे श्वास लेनेवाला आदमी भी प्रातःकाल गहरी साँसें लेगा तो उसका सीना मजबूत और चौड़ा होगा। यह बात सबके आजमाने लायक है। इस बातको अजमानेवालेको चाहिए कि वह पहले सीनेको नापले और फिर इस क्रियाको कर, महीने बाद फिर नापे। उसे जान पड़ेगा कि इतनेसे थोड़े समयमें भी सीना कुछ बढ़ गया है। सेण्डो वगैरह डम्बलकी कसरत करते हैं। इसमें भी यही रहस्य है। झपाटेके साथ डम्बल फिरानेसे खूब गहरे श्वास लेनेमें आते हैं और इससे सीना खूब मजबूत और चौड़ा होता है।

इस तरह हवा लेनेकी रीति जाननेके बाद रात दिन साँसमें खुली हवा लेनेकी आदत डालना आवश्यक है। हम लोगोंकी साधारण आदत ऐसी

है कि दिनमें हम घरमें या दूकानमें रुके रहते हैं और रातमें तिजोरीके ऐसी बन्द कोठरीमें सो जाते हैं और खिड़की दरवाजे हों तो भी उन्हें बन्द कर देते हैं। यह आदत बड़ी ही निन्दनीय है। जितने समय हो सके उतने समय--मुख्य कर सोते समय खुली हवा ही लेनी चाहिए। हो सके तो खुले बरांडे, चॉदनी और मैदानमें सोना चाहिए। जिन्हें ऐसा सुभीता न हो उन्हें चाहिए कि जितने दरवाजे और खिड़कियाँ खुली रक्खी जा सकें खोल रखनी चाहिए। हवा हमारी चौवीसो घंटे खानेकी खुराक है। इससे भय खानेकी कोई बात नहीं है। खुली हवासे या प्रातःकालकी हवासे बीमारी होगी ऐसा वहम कभी न करना चाहिए। जिन्होंने कुटेवसे अपने फैंफड़ोंको बिगाड़ लिया है, उन्हें खुली हवामें सरदी हो जाना सम्भव है; परन्तु वैसे मनुष्यको भी ऐसी सरदीसे नहीं डरना चाहिए। यह सरदी थोडेसे अर्सेमें दूर हो जायगी। क्षयके रोगियोंके लिए अब योरपमें जगह जगह खुली हवाके मकान बनाये गये है। देशमें महामारीका उपद्रव रहा करता है, इसका खास कारण हमारी हवा बिगाड़ने और बिगड़ी हुई हवा लेनेकी बुरी आदत है। इस बातको अच्छी तरह मान रखना चाहिए कि नाजुकसे नाजुक मनुष्य भी खुली हवा लेगा तो उसे लाभ ही होगा। अगर हम हवाको न बिगाड़ना और साफ हवाका लेना सीखलें तो बहुतसे रोगोंसे सहजमें ही बच जावें और हम पर गंदे रहनेका जो इल्जाम लगाया जाता है वह कई अंशोंमें दूर हो जाये।

जैसे खुली हवामें सोना जरूरी है वैसे ही मुँह न ढक कर सोना भी आवश्यक है। बहुतसे लोगोंकी ऐसी टेव होती है कि वे मुँह ढककर सोते हैं। ऐसा करनेसे हम अपनी निकली हुई विषैली वायुको वापस लेते हैं। वायु एक ऐसी वस्तु है कि थोड़ा भी मार्ग हो तो वह घुस जाती है। हमारा ओढ़ना कैसा ही लिपटा हुआ हो उसमें होकर थोड़ी बहुत हवा

घुस ही जाती है। यदि ऐसा न होता हो तो मुँह ढककर सोनेवाला घुटकर मर ही जायगा। परन्तु वैसा नहीं होता। इसका कारण यही है कि थोड़ी बहुत बाहरकी प्राण-वायु मिल जाती है। परन्तु इतनीसी हवा बस नहीं है। सरको ठंड लगती हो तो कुछ ओढ़ लेना चाहिए, टोपा-टोपी पहन लेना चाहिए; परन्तु नाक तो खुली ही रखनी चाहिए। कितनी ही ठंड पड़ती हो नाकको खुली रखकर ही सोना चाहिए।

हवा और उजेलेका इतना निकटका सम्बन्ध है कि उजेलेके विषयमें दो बातें इस प्रकरणमें लिखना योग्य है। जैसे हम हवाके बिना नहीं रह सकते वैसे ही उजेलेके बिना जीते नहीं रह सकते। नरकमें उजेलेका अभाव ही माना है। जहाँ प्रकाश नही होता वहाँकी हवा खराब होती है। यदि हम किसी अँधेरी कोठरीमें घुसेंगे तो वहाँकी हवामें हमें बदबू आवेगी। अँधेरेमें हमें देख नहीं पड़ता यही इस बातको प्रकट करता है कि हम उजेलेमें रहनेको पैदा हुए है। जितने अँधेरेकी हमें आवश्यकता है परमेश्वरने उतने अँधेरेवाली सुखदायी रात हमारे लिए बनाई है। कई आदमियोंकी ऐसी आदत होती है कि वे तीव्र गरमीके दिनोंमें भी अपने अँधेरे तैखानोंमें खिड़की-दरवाजे बन्द कर सो रहते है। हवा और उजेलेमें न रहनेवाले मनुष्य निर्बल और तेजोहीन हो जाते हैं।

योरपमें इन दिनों ऐसे वैद्य हैं जो बीमारोंको खुली हवा और प्रकाशसे आराम पहुँचाते है। वे चेहरे पर ही हवा और प्रकाश नहीं पहुँचाते, सारे शरीरकी त्वचा पर उसका प्रयोग करते हैं। बीमारको वे लगभग नंगा रखते है। ऐसे इलाजसे सैकड़ों बीमार अच्छे होते हैं। हमें अपने घरोंके सब खिडकी-दरवाजे हवा-उजेलेके आने-जानेके लिए खुले रखने चाहिए।

ऊपरके लेखको पढ़कर कई लोग ऐसी शंका करेंगे कि जो हवा और उजेलेकी इतनी आवश्यकता ही हो तो उन मनुष्योंको नुकसान क्यों नहीं होता जो अपनी कोठरियोंमें पड़े रहते हैं? मालूम होता है ऐसी शंका

करनेवालोंने विचार नहीं किया; क्योंकि हमारा विषय जैसे-तैसे जिन्दगी-को बिताना नहीं है। सम्पूर्ण आरोग्यसे रहना है। यह बात अच्छी तरह सिद्ध की गई है कि जहाँ जहाँ लोग कम हवा और उजेलेमें निर्वाह करते हैं वहाँ वहाँ वे बीमार रहते हैं। गाँवके लोगोंसे शहरके लोग नाजुक रहते है; क्योंकि उन्हें हवा और उजेला कम मिलता है। डरब-नमें हम लोगोंको खाँसी आदि बहुत होते है, इसका कारण सरकारी डाक्टरने अपनी रिपोर्टमें यह लिखा है कि हमें अच्छी हवा नहीं मिलती, या, हम उसे लेते नही है। हवा और उजेला आरोग्यके लिए ऐसा आव-श्यक है, कि हर एकको इनके विषयमें अच्छी तरह जानना चाहिए।

४ पानी।

हम पहले हवाको खुराक बतला चुके हैं। अब कहते हैं कि पानी भी खुराक है। हवा पहले दर्जेकी है और पानी दूसरे दर्जेकी। हवाके बिना आदमी कुछ मिनट ही जी सकता है, परन्तु पानीके बिना कई घंटे और देश-कालके अनुसार कई दिन भी रह सकता है। इतना होने पर भी यह बात निश्चित है कि अन्यान्य खुराकके बिना तो मुद्दत तक चलाया जा सकता है, परन्तु पानीके बिना नहीं चलाया जा सकता। पानी यदि उसे मिलता रहे तो वह बहुत दिन बिना अन्नके ही निकाल सकता है हमारे शरीरमें $\frac{७०}{१००}$ से अधिक अंश जलका है। पानीके बिना शरीरका वजन ८ से लेकर १२ रतलतक गिना जाता है। हमारी सारी खुराकोंमें थोड़ा बहुत पानी होता ही है।

पानी हमारी बड़ी आवश्यक वस्तु है, परन्तु हम उसकी सम्हाल बहुत कम रखते है। महामारी, हैजा आदि रोग हवा-पानीकी बे-दर-कारीके कारण ही होते हैं। लड़ाईमें रुके हुए लश्करोंमें कभी कभी कालज्वर फैल जाता है। इसका कारण भी दूषित पानी बताया गया है। फौजको जहाँ पर जैसा पानी मिल जाय, पीना पड़ता है। कई वार शहरोंमें रहने-वाले मनुष्योंको बुखार चढ़ आता है। इसका कारण प्रायः पानी होता है। खराब पानी पीनेसे बहुत वार पथरीकी बीमारी हो जाती है।

पानी खराब होनेके दो कारण होते हैं। एक तो ऐसी जगह पानीका होना कि जहाँ पर अच्छा न रह सकता हो और दूसरा यह कि हम उसे खराब करदें। खराब जगहके पानीको तो पीना ही न चाहिए और हम पीते भी नहीं; परन्तु अपनी गफलतसे खराब हुए पानीको पीते हुए हम नहीं हिचकिचाते। जैसे कि हम नदियोंमें चाहे जो डाल देते हैं और उसी पानीको धोने और पीनेके काम लाते हैं। नियम ऐसा है कि जहाँ पर हम नहाते-धोते हों वहाँका पानी पीनेके काममें कभी नहीं लाना

चाहिए । पीनेके लिए नदीके बहावकी ओरसे पानी लेना चाहिए जहाँ पर कोई न नहाता हो । हर एक गाँवमें नदीके दो भाग करना चाहिए । नीचेकी ओरका पानी नहाने-धोनेके लिए और ऊपरकी ओरका पीनेके लिए रहे । लश्कर जब पानीके नजदीक छावनी डालता है तब एक पुरुष नदीके बहावकी चौकसी करनेके लिए तीर पर पड़ाव डाल देता है । उसके बहावकी ओरका हिस्सा कोई नहाने-धोनेके लिए काममें लावे तो उसे सजा दी जाती है । जहाँ पर ऐसा बन्दोबस्त नहीं होता वहाँकी मेहनती स्त्रियाँ रेतीमें झरना खोदकर पानी भरती है । यह रिवाज बहुत अच्छा है । क्योंकि ऐसा करनेसे पानी रेती आदिमें छनकर हमें मिलता है । कुएके पानीमें कभी कभी बड़ी जोखम रहती है । बिना बँधे कुएमें जमीनमें समाये हुए मल-मूत्रका रस मिलता है । उसमें कई वार मरे हुए पक्षी पड़े होते हैं । कई वार पक्षी घौसले बना लेते हैं । जो कुए पके ठीक बँधे नहीं होते उनमें पानी भरनेवालोंके पैरोंका मेल वगैरह धुलकर पानी बिगड़ जाता है । मतलब यह है कि कुएका पानी पीनेमें बड़ी सावधानी रखनी चाहिए । टाँकियोंमें भरा हुआ पानी बहुत करके खराब होता है । टाँकीके पानीको ठीक रखनेके लिए उसे बार बार धोना चाहिए । वह ढकी रहनी चाहिए । और जहाँसे पानीकी आय हो वह स्थान स्वच्छ रहना चाहिए । ऐसी स्वच्छता रखनेकी बहुत ही कम आदमी कोशिश करते हैं । पानीको ठीक रखनेका सुनहरी नियम तो यह है कि पानीको आध घंटे तक खूब उकाल कर, उसे ठंडा होने दें और फिर बिना हिलाये उसे दूसरे बर्तनमें निकाल कर तीसरे बर्तनमें मोटे कपड़ेसे छानकर पीयें । इतना कर लेनेसे ही मनुष्य अपने कर्तव्यसे मुक्त नहीं हो जाता । सार्वजनिक उपयोगके लिए जो जल है वह उसकी और उस मुहल्ले या शहरमें रहनेवाले सारे मनुष्योंकी सम्पत्ति है । इस सम्पत्तिका उपयोग वह एक संरक्षककी भाँति कर सकता है । अर्थात् पानी खराब

हो ऐसा काम उससे नहीं होना चाहिए। उसे नदी या कुएको खराब न करना चाहिए। वह पानी पीनेके हिस्सेको नहाने-धोनेके काममें नहीं ला सकता; पानीके पास मल-मूत्रका त्याग नहीं कर सकता; जलस्थानके पास मुर्देको नहीं जला सकता और न उसकी खाक वगैरहको पानीमें डाल सकता है।

बहुत सम्हाल रखने पर भी बिल्कुल अच्छा पानी हमें नहीं मिलता। उसमें क्षार आदिका भाग होता है और कितनी ही वार तो सड़ी हुई वनस्पतिका अंश भी होता है। वर्षाका पानी अच्छेसे अच्छा समझा जाता है। परन्तु वह हम तक पहुँचे उसके पहले उसमें हवाके भीतरके धूलके कण मिल जाते है। स्वच्छ जलका असर शरीर पर कुछ और ही तरहका होता है। इस कारण कई अंग्रेजी डाक्टर अपने *बीमारोंको ' डीस्टील्ड ' अर्थात् शुद्ध किया हुआ पानी देते हैं।* यह पानी पानीकी भाफ बना कर तैयार किया हुआ होता है। जिसे कब्जी वगैरह रहती हो वह मनुष्य इस 'डीस्टील्ड' पानीका उपयोग करे तो उसे तुरंत दस्त हो जाता है। ऐसा जल बहुतते केमिस्ट (विलायती दवा बेचनेवाले) बेचते हैं। 'डीस्टील्ड' पानी और उसके उपचार पर हालमें एक ग्रन्थ लिखा गया है। लिखनेवालेकी मानता है कि ऊपरके मुआफिक शुद्ध हुए पानीको पिया जाय तो बहुतसे रोग मिट सकते हैं। यद्यपि इस कथनमें अतिशयोक्ति है तो भी यह बात असम्भव नहीं है कि बिल्कुल स्वच्छ हुए पानीका असर शरीर पर खूब पड़ता है।

सब लोग इस बातको नहीं जानते कि पानी हलका और भारी दो प्रकारका होता है; परन्तु जानना सबको चाहिए। भारी पानीमें साबूको मसलनेसे उसमें झाग नहीं उठते। इसका अर्थ यह हुआ कि पानीमें क्षार बहुत है। जैसे खारे पानीमें साबूका उपयोग नही होता वैसे ही

भारी पानीमें भी नहीं होता । भारी पानीमें अनाज कठिनतासे पकता है । इसी तरह भारी पानीसे अन्न पचनेमें भी कठिनाई होती है । भारी पानी स्वादमें खारा और हलका पानी, मीठा या सर्वथा स्वादरहित होता है । कई लोगोंका ऐसा मानना है कि भारी पानीमें पोषक तत्त्व होते है अतएव उसके उपयोगमें लाभ है । परन्तु वास्तवमें देखा जाय तो हलके पानीको काममें लाना ही अच्छा जान पड़ता है । वर्षाका पानी स्वभावसे अच्छा होता है । यह हलका ही होता है । इसे काममें लाना अच्छा है । इस बातको सब कोई मानते हैं कि भारी पानीको उकाले बाद आध घंटे चूल्हे पर रहने देनेसे वह हलका हो जाता है । चूल्हेसे उतारे बाद ऊपर कहे मुआफिक उसकी व्यवस्था करनी चाहिए ।

पानी कब पीना चाहिए और कितना पीना चाहिए, कितनी ही बार यह सवाल उठता है । इसका सीधा उत्तर यह है कि प्यास लगे तब पीना चाहिए और प्यास बुझे इतना पीना चाहिए । खाते वक्त और खानेके बाद पानी पीनेमें कोई रुकावट नहीं है; परन्तु खाते समय इतना स्मरण रखना चाहिए कि खुराक शीघ्र गले उतर जाय, इस खयालसे पानी न पीना चाहिए । खुराक अपने आप गले न उतरे तो समझना चाहिए कि या तो वह अच्छी तरह चबाई ही नही गई या उसे कोठा नही चाहता ।

वास्तवमें देखा जाय तो बहुत करके पानी पीनेकी जरूरत ही नहीं, और न होनी चाहिए । जैसे हमारे शरीरमें ७०/१०० से अधिक पानी है वैसे ही खुराकमें भी है । कितनी ही खुराकमें ७०/१०० से बहुत ज्यादा परिमाणमें पानी है । ऐसा एक भी अन्न नहीं है जिसमें सर्वथा पानी न हो । हम रांधनेमें बहुत पानी काममें लाते हैं । ऐसा होने पर भी पानीकी जरूरत क्यों पड़ती है ? इसका पूरा जवाब तो खुराकके

प्रकरणमें देंगे; परन्तु साधारणतया यहाँ पर इतना कह सकते है कि जिसकी खुराकमें प्यास बढ़ानेवाली चीजें जैसे मिरच, मसाला वगैरह नहीं आते उसे थोड़ा ही पानी पीना पड़ता है। जो अपनी खुराक मुख्य कर हरे मेवेसे पूरी करते हैं उन्हें कदाचित् ही केवल पानी पीनेकी इच्छा होती हो। बिना कारण यदि किसी मनुष्यको प्यास लगे तो समझना चाहिए उसे कुछ बीमारी है।

कई आदमियोंको चाहे जैसा पानी पीनेसे भी कुछ नहीं होता। ऊपरी निगाहसे ऐसा देख कर बहुतसे मनुष्य चाहे जैसा पानी पीने लग जाते हैं। इसका जवाब जो हवाके प्रकरणमें दिया गया है वैसा ही यहाँ भी दिया जा सकता है। हमारे शरीरके रक्तमें ऐसे अच्छे गुण हैं कि बहुत प्रकारके विषको वह रक्त ही दूर कर डालता है। परन्तु अच्छी तरवारको काममें लाये बाद जो उसकी धारको ठीक न किया जाय तो नुकसान ही होता है। यही बात रक्तकी है। रक्तके द्वारा अपने रक्षक सिपाहीका काम लेकर उसकी साल-सम्हाल न करें तो उसकी शक्ति कम हो जाती है और अन्तमें नाश हो जाता है। इसमें कुछ अचंभेकी बात नही है। यदि हम सदा खराब पानी पीयेंगे तो अन्तमें रक्त अपना काम करना छोड देगा।

५ खुराक।

हवा, पानी और अन्न ये तीनो हमारी खुराक हैं। परन्तु साधारणतया हम अन्नको ही खुराक गिनते है, और गेहूँ चने आदि दानेदार अनाजको अन्न मानते हैं। जो गेहूँ, चावल, जुवार आदि खाते हैं उन्हें अनाज खानेवाला गिनते हैं। वास्तवमें देखा जाय तो हवा पहली खुराक है, जिसके बिना चल ही नही सकता। और दूसरी खुराक पानी है जो अन्नसे बढ़कर है और कुदरतने, अनाजकी अपेक्षा ज्यादा आसानीसे मिल सके इतना दिया है। अनाज तीसरे दर्जेकी अन्तिम खुराक है।

अनाजके विषयमें लिखना कठिन है कि कौनसा अनाज लेना चाहिए, कब लेना चाहिए, और कितना लेना चाहिए। इन सब बातोंके विषयमें बड़ा मतभेद है। प्रजाओंकी जुदी जुदी रीतियाँ हैं। एक ही अनाजका अलग अलग मनुष्य पर अलग अलग प्रभाव पड़ता है। ऐसी स्थितिमें ठीक निर्णय कर देना, या, ऐसा कह देना कि यही ठकि है, टेढ़ी खीर ही नही है, अशक्य भी है। संसारके कई भागोंमें मनुष्य दूसरे मनुष्योंको मार कर उनका मांस खाते है। वह उन लोगोंका अनाज है। कई ऐसे भी है जो विष्ठा खाते हैं। वैसोंका अनाज विष्ठा है। कितने ही केवल दूध पर निर्वाह करते है। उनका वही अनाज है। कई फलाहारी हैं उनका अनाज फल ही है। इस प्रकरणमें अनाजसे अभिप्राय खाद्योंसे है।

यद्यपि यह कहना कठिन है कि कौनसा अनाज खाना चाहिए, परन्तु इस विषयमें विचार करना मनुष्यका धर्म है। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि अनाजके बिना शरीरका व्यापार नहीं चल सकता। अनाजके लिए हम सैकड़ों दुःख उठाते है और अनाजहीके लिए सैकड़ों

पाप करते हैं । ऐसी स्थितिमें यह जाननेकी आवश्यकता है कि हम अनाज क्यों खाते हैं ? इससे हम विचार कर सकेंगे कि कौनसा अनाज खाना चाहिए । इस बातको सब कोई स्वीकार करेंगे कि सौमें निन्यानवे मनुष्य तो केवल स्वादके लिए खाते है । फिर वे बीमार पड़े या अच्छे रहें, इस बातकी वे परवा नही करते। कितने ही मनुष्य खूब खा सके इसके लिए जुलाब लेते है, या अन्न पचनेके लिए चूर्णकी फॉकी लेते हैं। कितने ही खूब ठूँस ठूँसकर भोजन किये बाद के कर देते हैं और फिर स्वादिष्ट वस्तु खानेको तैयार होते है । कोई खूब खाकर फिर एक-दो वक्त नहीं खाते। कोई खाते-खाते लापरवाही कर मर मिटते है। ये सब उदाहरण इस लेखकके देखे हुए हैं । स्वयं लेखकके जीवनमें ऐसे फेरफार हुए हैं कि उसे अपने कितने ही कृत्यों पर हँसी आती है और कितनेंके लिए लज्जा आती है । एक ऐसा समय था कि लेखक सुबह चाय पीकर दो तीन घंटे बाद नास्ता लेता था, और एक बजे भोजन करता था। फिर तीन बजे चाय पीता था और ६–७ बजे पूरा भोजन करता था । उस समय लेखक-की स्थिति बड़ी दया-पात्र थी । उसे सोजा चढ़ता था, दवाकी बोतल उसके पास ही रहती थी । अच्छी तरह खाया जा सके इसके लिए वह प्राय: जुलाब लिया करता था और पुष्टिके लिए दूसरी औषधि लेता था ।ऐसे ही चलता रहता था। उस समय लेखकमें जितनी शक्ति थी उससे इस समय तिगुनी वह अपनेमें मानता है, यद्यपि अब उसकी उत्तरावस्था है । वैसी जिन्दगी दया करनेकी है और गहराईमें उतर कर देखें तो अधम है–पापपूर्ण है, धिक्कारके योग्य है ।

मनुष्य खानेके लिए पैदा नहीं हुआ है और न खानेके लिए जीता ही है। परन्तु वह अपने बनानेवालेको पहचाननेके लिए जन्मा है और इसी कामके लिए जीता है । यह पहचान शरीरको निबाहे बिना नही हो सकती और शरीर खुराकके बिना नहीं रह सकता । अतएव खुराक लेनेकी

आवश्यकता पड़ती है। ऊँचेसे ऊँचे विचारवाले आस्तिक स्त्री-पुरुषोंके लिए इतना विचार बस है। और नास्तिक भी इतना तो स्वीकार करेंगे कि आरोग्य कायम रखकर शरीरको तन्दुरुस्त रखनेके लिए खुराक लेनी चाहिए।

पशु-पक्षियोंको देखिए। वे स्वादके लिए नहीं खाते, ठूँसकर नहीं खाते। जब भूख लगती है तब खाते है और भूख मिट जाय उतना ही खाते हैं। वे अपनी खुराकको सिजाते नही हैं। कुदरत तैयार करती है और व उसमेंसे अपना भाग ले लेते हैं। तब क्या मनुष्य स्वाद लेनेके लिए पैदा हुआ है? क्या मनुष्यके भाग्यमें ही सदाके लिए बीमारी लिखी है? उन पशु-पक्षियोंको भूख नही सताती जो पालतू नही है—जो मनुष्यकी संगतिमें नही रहते। उनमें ऐसे भेद देखनेमें नही आते कि कोई गरीब और कोई श्रीमान् हो, किसीको दिनमें दस वार खानेको मिलता हो और किसीको एक वार भी कठिनाईसे मिलता हो। यह सब भेद हमारी ही जातिमें देख पड़ते है। ऐसा होने पर भी हम अपनेको पशुओंसे बुद्धिमान् समझते है। परन्तु यह बात समझ रखनी चाहिए कि हम अपने पेटको ही परमेश्वर मानकर उसकी पूजामें जीवन बिताते है तो हम पशु-पक्षियोंसे नीचे ही हैं।

बहुत विचार करनेसे हम देख सकेंगे कि हम जो असत्य-भाषण, व्यभिचार, चोरी वगैरह करते हैं उसका प्रधान कारण हमारी स्वादेन्द्रियकी स्वतन्त्रता है। यदि हम अपने स्वादको वशमें करलें तो दूसरे विषयोंको नष्ट कर देना बहुत आसान है। ऐसा होने पर भी हम खूब खाने और स्वादसे खानेको पाप नही गिनते। यदि हम पाप करें, व्यभिचार करें, झूठ बोलें, तो हमे दूसरे तिरस्कारकी निगाहसे देखेंगे। नीति सम्बन्धी कइ उत्तमोत्तम ग्रन्थ चोरी, व्यभिचार और असत्यके सम्बन्धमें लिखे गये है। परन्तु स्वादेन्द्रियके वश हुए लोगोंके सम्बन्धमें कोई ग्रन्थ नही लिखा गया। यह नीति और अनीतिका विषय ही नहीं है। इसका सबल कारण तो यह है

कि हम सब एक ही नावमें बैठे हैं। मटकी कूँड़ेको क्या हँसेगी। हमारे महा पुरुष भी स्वादको सर्वथा न जीत सके अर्थात् स्वाद् लेनेमें उन्हें भी दोष न देख पड़ा। उन्होंने बहुत किया तब यह लिखा है कि हमें इन्द्रियोंको वशमें रखनेके लिए जहाँतक बने मिताहारी होना चाहिए; परन्तु ऐसा नहीं लिखा कि स्वाद् लेनेसे हममें और और दोष पैदा हो जाते है। अच्छी सोसाइटीवाले चोर, ठग और विषयीको निकाल दूर करदें परन्तु वे स्वयं साधारण वर्गसे कई गुणा स्वाद लेते होंगे। मनुष्यका गृहस्थीपन उसकी थालीमें समाया हुआ है। जैसे चोरोंके गाँवमें चोरी गुनाह नही समझा जाता वैसे ही हम सबको स्वादेन्द्रियके गुलाम होनेसे हम इस गुलामीमें गुनाह नहीं गिनते—नहीं देखते। इतना ही नहीं, उलटा हम इसमें आनन्द मानते है। विवाहके समय हम स्वादके लिए अच्छे अच्छे भोजन बनाते है। मरणके समय भी ऐसा करते नही चूकते। त्यौहार आया कि मिठाई बनी। मेहमान आया कि अच्छी-अच्छी तैयारियाँ हुई। अड़ोसी-पड़ोसी और सगे-सम्बधियोंको न खिलावें या उनके यहाँ न खावें तो अविवेक माना जाता है। निमन्त्रित जनको खूब ठूँस ठूँसकर न खिलावें तो कंजूस समझे जाते है। छुट्टीके दिन अच्छा भोजन करना ही चाहिए। रविवारके दिन अजीर्ण हो जाय इतना खाना ही चाहिए। इस तरह हमने एक दोषको भी गुण ठहरा लिया है। खानेकी तैयारीमें अनेक ढोंग दाखिल कर दिये हैं कि जिससे हमारी गुलामी, हमारा पशुपन किसी तरह हमारे देखनेमें न आवे। यह प्रश्न आरोग्य विषयकी मर्यादाके बाहर जाता है। अतएव इसे न छेड़ कर हमें चुप होना पड़ेगा, परन्तु आरोग्यके सम्बन्धमें जितना विचारना योग्य है उतना सबको विचारना चाहिए।

अब दूसरी रीतिसे विचार किया जाता है। दुनियाँका ऐसा नियम देख पड़ता है कि कुदरत संसारके सब प्राणियोंके लिए सदा खुराक तैयार करती है। कुदरतकी सरकारमें बीमे नहीं उतारे जाते। वहाँ कोई भूल नहीं

होती। कोई सोता नहीं है। आलस कोई नहीं करता। वहाँका कार्य नियमित रीतिसे प्रतिक्षण हुआ करता है अर्थात्, कुदरतको सालभरका या एक दिनका भंडार नहीं भरना पड़ता। हमें इच्छासे या अनिच्छासे उसके कानूनके वश, होना ही पड़ता है। यदि हम उसके नियमको समझ कर चलें तो एक भी घरमें एक दिनके लिए भी भूख अपना डेरा न जमा पावे। यह बात स्पष्ट है कि संसारमें खाद्य तो मनुष्योंके योग्य ही होता है, उसमें अगर कोई ज्यादा खा जाय, या, न खानेकी चीज खा जाय तो औरोंके लिए कमी पड़ेगी ही; और यह बात हुई तो कहीं-न-कहीं भूखके डेरे लगेहींगे। इस संसारमें हजारों राजों-महाराजों और सेठ-साहूकारोंकी रसोईमें उनके और उनके नोकरोंके लिए आवश्यकतासे बहुत ज्यादा अनाज उठता है। यह सारा अन्न वे दूसरोंके पेटका ले लेते है। फिर संसारमें क्यों न भूखकी ज्वाला बढ़े? कल्पना करो कि दो कुओंकी एक ही झिर है और उन दोनोंमें बराबर पानी जाता है। अब इनमेंसे एक कुएमें ज्यादा पानी जाने लगे तो दूसरेमें कम हो ही जायगा। अगर यह नियम सही है तो ऊपर लिखा हुआ नियम कुछ इस लेखकका घरू नही है। यह नियम बड़े ही बुद्धिमान् महापुरुषोंका वर्णन किया हुआ है। अब यदि हम अपनी आवश्यकतासे विशेष खाते हैं तो वह अनाज चोरीका खाते है। जितना हम स्वादके लिए खाते हैं वह कच्चे पारेकी भाँति किसी न किसी रूपमें फूट निकलता है। उतने ही रूपमें हमारा स्वास्थ्य बिगड़ता है और हम दुखी हो जाते हैं। इतना समझे बाद हम इस बातका सहजमें निर्णय कर सकेंगे कि कौनसी खुराक खानी चाहिए और कितनी खानी चाहिए।

कौनसी खुराक खानी चाहिए इसका निर्णय करनेके पहले यह निर्णय करना ठीक होगा कि कौनसी खुराक न लेनी चाहिए। जो कुछ मुखके द्वारा हमारे पेटमें जाता है उसे खुराकका नाम दें, अनाज कहें

तो अफीम-तंबाकू भाँग-गाँजा, चाह-काफी, कोको-शराब, मसाले वगैरह सब अन्न ही हैं । परन्तु इस लेखकको बड़े ही अनुभवसे जान पड़ा है कि इन चीजोंको सर्वथा छोड देनी चाहिए । कितनी ही चीजोंका इसे स्वयं अनुभव हुआ है और कितनी ही चीजोंका दूसरोंको अनुभव करते देखा है ।

शराब और भाँगके लिए लिखना ही क्या, प्रत्येक मतमें इनकी मनाई की है । इनके पीनेकी कदाचित ही कोई आज्ञा दे । शराबसे कुटुम्ब-के कुटुम्ब नष्ट होगये हैं । लाखो शराबी धूलमें मिल गये । शराब पीनेवालेको कुछ भान नहीं रहता । वह, कई वार माँ और स्त्रीके भेदको भूल जाता हैं । इससे मनुष्यका कोठा जल जाता है । अन्तमें वह जमीन पर भाररूप हो जाता है । शराब पीनेवाले मोरियोंमें देख पड़ते हैं । ऐसी स्थिति शराब पीते ही हो पडती है, यही नही, सचेत अवस्थामें भी उसकी बड़ी बुरी दशा रहती है । उसका मन भटकता रहता है । वह भानमें होता है तब भी सुस्त रहता है । यह शराब और इसीके दर्जेकी भाँग सर्वथा छोडने लायक वस्तु है । इस विषयमें दो मत होने ही न चाहिए । कई ऐसा मानते है कि दवाके तौर पर शराब ले सकते है; परन्तु असलमें इसकी आवश्य-कता नही है । इस बातको योरप—(जो शराबका घर है) के डाक्टर भी मानते है । पहले बहुतसी बीमारियोंमें शराबको काममें लाते थे, पर अब वह बिल्कुल बंद होगई है । परन्तु यह दवावाली दलील किसी और ही उद्देशसे दी जाती है । शराबके हिमायती कहना चाहते है कि दवामें शराब पीते ही है फिर पीनेमें क्या दोष है ? परन्तु इन्हें सोचना चाहिए कि विष, या अजेपाल्या दवाके तौर पर काममे आता है, कह कर कोई उसे खुराक नही बना लेता । कदाचित् ऐसा हो भी सकता है कि किसी बीमारीमें शराबसे लाभ भी पहुँचे; परन्तु इससे इतना नुकसान पहुँचा है कि किसी भी समझदार मनुष्यका कर्तव्य है कि वह शराबको दवाके

तौर पर भी न ले। शराबसे इस शरीरको कायम रखनेमें हजारों मनुष्योंका अमंगल होता हो तो इस शरीरको जाने ही देना चाहिए। हिन्दुस्तानमें लाखों मनुष्य ऐसे है जो डाक्टरकी सलाह होने पर भी शराबको नहीं छूते। वे शराबकी या जिस चीजकी प्रतिज्ञा कर लेते है उसे जीते जी कभी नहीं लेते। अफीमका भी शराबके साथ ही विचार करना चाहिए। अफीमका नशा शराबके नशेसे दूसरे प्रकारका है; परन्तु इससे होनेवाली पामाली शराबसे कम नहीं है। अफीमके वश हुई चीनी प्रजा महान और स्वतन्त्र राजवाली होने पर भी निर्बल है। अफीमके वश हुए हमारे जागीरदार अपनी रोटी खो बैठे है।

जैसे दारू, भॉग और अफीम खराब है वैसे ही चुरुट-तम्बाखू भी खराब है। चुरुट-तम्बाखूकी सत्ता मनुष्य जाति पर इतनी ज्यादा होगई है कि इसे मिटानेमें बहुत समय लगेगा। छोटे-बड़े सब इसकी झड़पमें आगये हैं। आश्चर्य तो यह है कि नीतिमान् कहलानेवाले मनुष्य भी इसका व्यवहार करते हैं–उसे काममें लाते हुए वे शरमाते नहीं है। मित्रोंका स्वागत करनेके लिए यह बड़ा भारी साधन हो पड़ा है। इसकी रोक न हो कर फैलाव होता जाता है। साधारण मनुष्य तो जानते भी नहीं है कि चुरुटका व्यसन दृढ़ करनेके लिए चुरुटके व्यापारी उसकी बनावटमें हजारों युक्तियॉ करते हैं। जर्दे पर वे अनेक प्रकारके सुगन्धित तेजाब छींटते हैं। उसमें अफीमका जल सींचते हैं। ऐसे प्रयोगोंसे चुरुट हम पर ज्यादा ज्यादा असर जमाती जाती है। इसका फैलाव करनेके लिए लाखों रुपये विज्ञापन देनेमें उठते है। चुरुट बेचनेवाली कंपनियाँ योरपमें अपने छापेखाने चलाती हैं। बायस्कोप खरीदती है। अनेक प्रकारके इनाम बाँटती है। लॉटरियाँ निकालती है। प्रसिद्धिके लिए पानीकी तरह पैसे खोती है। परिणाम यह हुआ है कि स्त्रियाँ भी चुरुट पीने लगी हैं। चुरुटकी कवितायें बनी हैं और चुरुटको गरीबके मित्रकी उपमा दी गई है!

चुरुट-तम्बाकूसे जो नुकसान पहुँचा है उसका आँकड़ा नहीं बाँधा जा सकता। चुरुट पीनेवाले मनुष्य ऐसे ज्ञान-शून्य हो जाते है कि किसीकी परवा न करके दूसरोंके घरमें बिना इजाजतके ही चुरुट जलाने लगते हैं और शरम नहीं करते।

ऐसा अनुभव हुआ है कि चुरुट-तम्बाखू पीनेवाले मनुष्य उस वस्तुके पानेके लिए और भी अनेक अपराध करते है। बच्चे अपने माँ-बापके पैसे चुराते है। जैलमें कैदी बड़ी जोखम उठाकर चुराई हुई चुरुटको छुपा रखते हैं। वे दूसरी खुराकके बिना चलालेंगे, परन्तु बीड़ीके बिना उनका काम नहीं चलेगा। लड़ाईमें चुरुट पीनेवाले सिपाही बिना चुरुटके दीन होकर किसी कामके नहीं रहते।

चुरुटके सम्बन्धमें लिखते लिखते स्वर्गीय टाल्सटायने लिखा है कि एक मनुष्यको अपनी स्त्रीका खून करनेका विचार हुआ। उसने छुरी निकाली, वह चलानेको तैयार हुआ, पछताया और पीछा हट गया। फिर चुरुट पीनेको बैठ गया। जहाँ चुरुटका धुआँ उसके दिमागमें समाया, कि चुरुटके विषसे उसकी बुद्धि घिर गई और उसने खून कर डाला। टाल्सटाय मानता था कि चुरुट एक ऐसा सूक्ष्म नशा है कि वह कितने ही अंशमें शराबसे भी खराब माना जाना चाहिए।

चुरुटका खर्च कुछ साधारण नहीं है। सब चुरुट पीनेवालोंको उनकी हैसियतके मुआफिक यह खर्च ज्यादा पड़ता है। कितने ही मनुष्य चुरुटके पीछे ७५ रुपये महीना खर्च कर देते है। ये उदाहरण इस लेखकने स्वयं देखे हैं।

चुरुटसे पाचन-शक्ति कम हो जाती है, स्वाद जाता रहता है, और भोजन फीका लगने लगता है; अतएव मसाले वगैरह डालने पड़ते है। चुरुट पीनेवालेका श्वास बदबू मारने लगता है। चुरुटका धुआँ हवाको खराब करता है। कितनी ही वार इससे मुँहमें छाले पड़ जाते हैं, दाँत-दाढ़ काले-

पीले हो जाते हैं और कितनेहीको तो इससे भयंकर बीमारियाँ हो जाती हैं। जो शख्स इस बातको मानता है कि शराबका नशा खराब है, नहीं समझमें आता कि वह चुरुटका नशा कैसे कर सकता है। ऐसा होने पर भी जान पड़ता है इस नशेकी सूक्ष्मता उन्हें फँसाती है। नीरोग रहनेकी इच्छा करनेवाले आदमीको चाहिए कि चुरुटको अवश्य छोड़दे।

शराब, तम्बाखू, भाँग, आदिके व्यसन हमारे शरीरके आरोग्यको छीन लेते हैं। इतना ही क्यों, हमारे धन और मनके आरोग्यको भी वे छीन लेते है; और हमें अपना गुलाम बना कर हमारी नीतिका भी नाश कर देते हैं।

यह काम अत्यन्त कठिन जान पड़ता है कि चाय, काफी और कोको-को खराब ठहरा कर समझा दिया जाय, परन्तु इतना कहे बिना छुटकारा नही है कि ये चीजें दूषित अवश्य है। इनमें भी एक तरहका नशा है। अगर चाय-काफीके साथ दूध-शक्कर न मिलाई गई हो तो उनमें पोषण करनेवाला कोई तत्त्व नहीं है। चाय-काफी पर रखनेके कितने ही प्रयोग किये गये हैं। उनसे सिद्ध हुआ है कि इनमें खून बढ़ानेवाली चीजें बिल्कुल नहीं हैं। साधारण तौर पर थोड़े ही वर्ष पहले हम न चाय पीते थे और न काफी; परन्तु सुधारका प्रवेश हुए बाद चाय-काफी साधारण वस्तु हो पड़ी है। सहज मिलनेको आये हुए मेहमानको भी हम यही पिलाते हैं। चायकी पार्टियाँ दी जाने लगी हैं। लार्ड कर्जनके जमानेमें तो चायने कहर ढाया है। इन्होंने चायके व्यापारियोंकी हिमायत करके घर घरमें चायका फैलाव किया और अब लोग नीरोगी वस्तुके पान करनेकी जगह रोगभरी चायको पीनेवाले होगये।

कोकोका फैलाव विशेष न हुआ; क्योंकि वह चायसे महँगा है। अच्छे भाग्य हैं कि हमारा उससे विशेष परिचय नहीं हुआ है; परन्तु फैशनेबल घरोंमें तो उसकी बड़ी भारी राज-सत्ता है।

चाय, काफी और कोको इन तीनों वस्तुओंमें ऐसा गुण है कि वह हमारी पाचन-शक्तिको मन्द करता है। इनमें नशा है; क्योंकि जिन्हें इनका व्यसन हो जाता है वे इन्हें छोड़ नहीं सकते। लेखक स्वयं चाय पीता था। यदि ठीक समय पर उसे चाय न मिलती तो उसे आलस आने लगता था। यह निशानी निःसन्देह नशेकी है। एक वार लगभग ४०० स्त्रियाँ और बच्चे इकट्ठे हुए थे। व्यवस्थापक-मंडलने निश्चय किया कि इन्हें चाय-काफी न दी जाय। इस उत्सवमें जो स्त्रियाँ इकट्ठी हुई थी उन्हें शामके ४ बजे बराबर चाय पीनेकी आदत थी। व्यवस्थापकोंको इत्तिला हुई कि स्त्रियोंको चाय न मिलेगी तो वे बीमार हो जायँगी और वे चल-फिर न सकेंगी। लाचार ठहरावमें फेरफार करना पड़ा। चाय बनानेकी तैयारी हो रही थी कि दौड़ा दौड़ मच गई। जल्दी चाय चाहिए। स्त्रियोंके माथे चढ़ गये। उनका पल पल महीनेके ऐसा बीतने लगा। जब चाय मिली तब इन भली बाइयोंके मुख पर चमक आई और वे सावधान हुईं। यह दृश्य वास्तविक घटना है। एक बाईको चायकी आदतसे ऐसा नुकसान पहुँचा कि उसका हाजमा खराब होगया और उसका सिर सदा दुखने लगा, परन्तु जबसे उसने मन मारकर चाय छोड़दी तबसे उसकी तबीयत बहुत ही ठीक हो गई। इंग्लेंडकी बेटरसी म्यूनिसिपालटीके डाक्टरने शोधकर यह बात जानी है कि उसके मुहल्लोंमें हजारों स्त्रियोंके जो ज्ञान-तन्तु खराब होगये है इसका कारण चायका व्यसन है। इस लेखकके जाननेमें ऐसे अनेक उदाहरण है जिनमें चायसे मनुष्योंका आरोग्य बिगड़ गया है। लेखकको पक्का विश्वास है कि चायसे मनुष्यके आरोग्यको बहुत ही नुकसान होता है।

काफीके सम्बन्धमें एक दोहा प्रसिद्ध है—

कफ-काटन बादी-हरन, धातु-हीन बल-छीन
लोहीको पानी करे, दो-गुन ओगन तीन

यह दोहा ठीक जान पड़ता है । कफ और वायुके हरनेकी शक्ति काफीमें भले ही हो । यह शक्ति और और वस्तुओंमें भी है । इन कारणोंसे जो काफी पीना चाहते हों उन्हें चाहिए कि थोड़ा अद्रकका रस पीवें । उससे काफीकी गरज निकल जायगी । परन्तु जो वस्तु धातुको—जिसका संग्रह करनेकी जरूरत है—हरती है, बलको क्षीण करती है और खूनका पानी बनाती है उसका त्याग करना ही अच्छा है । कोकोमें भी काफीके समान दोष और चायके जैसा नशा है । इससे भी संज्ञा-हीनता होती है ।

जो आरोग्यमें नीतिका भी समावेश करते हैं उनके सम्मुख इन तीनों वस्तुओंके विषयमें नीचे लिखी हुई दलील विशेषताके साथ दी जा सकती है । चाय, काफी और कोको बहुत करके शर्तबन्दी मजदूरोंकी मेहनतसे पैदा होते हैं । जहाँ ये पैदा होते हैं वहाँ के लोगों पर जैसा जुल्म होता है उसे यदि हम अपनी आँखोंसे देख पावें तो कभी इन्हें न लें । कोकोके खेतों पर होते हुए जुल्म पर बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे गये हैं । सच बात तो यह है कि हम सब अपनी खुराककी उत्पत्तिके सम्बन्धमें पूरा पूरा ज्ञान सम्पादन करें तो $\frac{९९}{१००}$ चीजोंका त्याग करदें ।

इन वस्तुओंकी एवजमें निर्दोष और पुष्टि-कारक चाय नीचे लिखी हुई रीतिसे बन सकती है । काफी और इस निर्दोष चायके स्वादमें बहुतसे काफी पीनेवाले भी फरक नहीं बतला सके । गेहूँको लेकर खूब साफ करने चाहिए । फिर उन्हें चूल्हे पर कढ़ाईमें सेकने चाहिए । यहाँ तक कि वे सुर्ख होकर कुछ कुछ कालोस पर आजावें । फिर उन्हें उतार कर काफीकी चक्कीमें साधारण बारीक दललेना चाहिए । उसमेंसे एक चम्मच प्यालेमें डाल कर उस पर खौलता हुआ पानी डालना चाहिए । अगर इसे एक मिनिट तक चूल्हे पर रक्खा जाय तो बहुत ही अच्छा होगा । इसमें जरूरतके मुआफिक दूध-शक्कर डालनी चाहिए । दूध-शक्कर न डाल कर भी इसे पी सकते हैं । हर एक शख्सको यह

प्रयोग कर देखना चाहिए । इसे पीना शुरू कर जो शख्स चाय, काफी और कोको छोड़ेंगे उनका पैसा बचेगा और आरोग्य खराब होनेसे बचेगा । जो कोई गेहूँको सेकने आदिकी तकलीक न करना चाहे वह इस चूर्णको लेखकके पास--सत्याग्रह-आश्रम अहमदाबाद--से पा सकेगा।

इस बातको हम जान गये कि कितने ही पदार्थ अन्य कारणोंसे छोड़ने योग्य हैं । अब यह बतलाना बाकी है कि अन्य कितने ही पदार्थ अन्य कारणोंसे छोड़ने और कम ग्रहण करने योग्य है । परन्तु इस बातको छोड़कर यह विचार करते हैं कि हमारी खुराक क्या होनी चाहिए ।

हम खुराकके सम्बम्धमें दुनियाँके बड़े-से-बड़े तीन भाग कर सकते है। (१) एक विभागमें ऐसे मनुष्य हैं कि जो इच्छासे या विवश होकर केवल वनस्पतियोंसे उत्पन्न हुई वस्तु पर निर्वाह करते है । यह भाग बड़े-से-बड़ा है। इस भागमें हिन्दुस्तान, योरप और चीन-जापानका बड़ा हिस्सा आता है । इनमें कुछ धर्मके कारण केवल वनस्पतिके पदार्थ लेते है; परन्तु बहुतसे मांसादि न मिलनेके कारण वनस्पति पर निर्वाह करते है। यदि इन्हें प्रसंग मिले तो ये शौकसे मांस खाते हैं । ऐसे लोग, इटेलियन, आइरिश, स्काटलेंड्के बहुतसे लोग, रशियाकी गरीब बस्ती, और चीन-जापानकी साधारण प्रजा है। इटेलीकी मुख्य खुराक मेकेरोनी, आयर्लेडमें पुटेटो, स्काटलेंड्में ओटमील और चीन-जापानमें चावल है । (२) दूसरे विभागके लोग वनस्पतिके साथ कोई न कोई प्रकारके मांस या मछली आदिको एक या अनेक वार सदा खाते है । इसमें इंग्लेंडका बड़ा हिस्सा है । हिन्दुस्तानके अमीर मुसलमान या वे हिन्दु जो धर्मके विरुद्ध नहीं मानते इसी विभागमें हैं। धनवाले चीनी-जापानी भी इसी विभागमे है। यह विभाग यद्यपि पहलेसे छोटा हो चला है तब भी बहुत बड़ा है, (३) तीसरे विभागमें बहुत थंडे मुल्कमें रहनेवाली जंगली

प्रजा, और कितने ही सिद्दी हैं जो मांस पर ही निर्भर हो रहे है । यह भाग बहुत छोटा है और ज्यों ज्यों यूरोपियन यात्रीके समागममें आता जाता है और भी छोटा होता जाता है । अर्थात् अपनी खुराकमें वनस्पतिको मिलाता जाता है । ऐसी स्थितिमें हम सहजमें ही यह अनुमान कर सकने है कि मनुष्य तीनों स्थितिमें जिन्दा रह सकता है; परतु हमें तो यह सोचना है कि सबसे अच्छी आरोग्य-वर्धक खुराक कौनसी है ?

शरीरकी रचना देखनेसे जान पड़ता है कि कुदरतने मनुष्यको वनस्पति खानेवाला बनाया है । दूसरे प्राणियोंके साथ अपनी तुलना करनेसे जान पडता है कि हमारी रचना फलाहारी प्राणियोंसे बहुत अधिक मिलती है । अर्थात् बन्दरोंसे बहुत ज्यादा मिलती है । बन्दर हरे और सूखे फल-फूल खाते है । फाड़ खानेवाले शेर चीते आदि जानवरोंके दाँत और कोठेकी बनावट हमसे और ही प्रकारकी है। उनके पंजेके सदृश हमारे पंजे नहीं हैं । पशु मांसाहारी नहीं है । जैसे गाय बैल । हम इनसे कुछ कुछ मिलते है, परन्तु घास आदि खानेके लिए आरे जैसी आते उन्हीकी हैं, हमारी नहीं है । इन बातोंसे बहुतसे शोधक ऐसा कहते हैं कि मनुष्य मॉसाहारी नहीं है । इतना ही क्यों, वह चाहे जिस वनस्पतिके खानेके लिए भी नहीं बना है । उसकी असली खुराक तो वनस्पतिमें भी अमुक फलादि ही होनी चाहिए ।

रसायन–शास्त्रियोंने प्रयोग करके बतलाया है कि मनुष्यके निर्वाहके लिए जिन तत्त्वोंकी आवश्यकता है वे सब फलोंमेंसे मिल जाते हे । केले, नारंगी, खजूर, अंजीर, सेव, अनन्नास, बादाम, अखरोट, मूँगफली, नारियल आदिमें तन्दुरुतीको कायम रखनेवाले सारे तत्त्व हैं । इन शोधकोंका मत हे कि मनुष्यको रसोई पकानेकी कोई आवश्यकता नहीं है । जैसे और प्राणीको सूर्य-तापसे पकी हुई वस्तु पर तन्दुरुस्ती कायम रखनी चाहिए वैसे ही हमारे लिए भी होना चाहिए । उनका मन्तव्य है

कि पकानेसे खाने योग्य वनस्पतियोंका सत्व नष्ट हो जाता है और पोषक-शक्ति कम हो जाती है। वनस्पतिका खास गुण चैतन्य देना है और वह पकानेसे निर्बल हो जाता है। इन लोगोंका तो यहाँ तक कहना है कि पकाये बिना जिस वनस्पतिको हम खा नही सकते वह हमारी खुराक ही नहीं हो सकती।

यदि ऊपर लिखी हुई बात सही हो तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे घरोंमें जो बहुतसा समय रसोई बनाने और खानेमें व्यतीत होता है न हो। थोड़े समयमें ही खाने-पीनेका काम काज निवट जाय। हमारे स्त्री-वर्गका बहुतसा समय, जो घरकी रसोईमें लगता है, बच जाय और बहुतसे मामलोंमें हम ऐसे स्वतन्त्र हो जायँ कि जिससे बचे हुए पैसे और समयका बहुत अच्छा उपयोग कर सकें।

इस बातको सुनकर कोई कहेगा कि सब कोई रसोई बनाते बन्द हो जायँ, अपनी स्त्रियोंको रसोई बनानेकी कैदसे छुडादें, या, स्त्रियाँ ही स्वयँ छूट जाना चाहें; तो ये सब बातें स्वप्नकीसी है—होने योग्य नही हैं। परन्तु अभी हम इस बातका विचार नहीं कर रहे हैं कि सब ऐसा कर सकते हैं या नहीं; हम तो यही विचार कर रहे हैं कि अच्छा क्या है। सम्पूर्ण आरोग्यको हम समझें तो साधारण आरोग्य पा सकते हैं। सर्वोत्तम खुराक कौनसी है इस बातको समझलें तो हम जान सकेंगे कि साधारणतया क्या खाना चाहिए।

और एक बात है, यदि फलाहार उत्तम खुराक हो, तो हमें इस बातसे विशेष सम्बन्ध नही है कि सब उसे ग्रहण करते है या नहीं; परन्तु इसमें किसी प्रकारका विरुद्ध मत नहीं होगा कि यदि हम ग्रहण कर सकते हों तो करना चाहिए।

इस विषय पर योरपमें बहुतसे ग्रन्थ लिखे गये हैं। फलाहारके प्रयोगकी परीक्षा करनेवाले यूरोपियन भी पाये जाते हैं। कितनेहीने अपने

अनुभव प्रकट किये हैं। ये सब लोग धर्मके कारण फलाहारी नही हुए, आरोग्यके लिए हुए हैं। जुस्ट नामके जर्मनने फलाहार पर एक ग्रन्थ लिखा है। बहुतसे उदाहरण और दलीलें देकर उसने बतला दिया है कि फलाहार उत्तम खुराक है। उसने बहुतसे बीमारोंके रोग फलाहार और खुली हवासे मिटाये है। उसका कहना तो यहाँ तक है कि जिस देशमें जो फल मिलते हों मनुष्य उन्हींमेंसे अपना पूर्ण पोषण पा सकता है।

यहाँ पर मैं अपने ही किये हुए प्रयोगका वर्णन करूँ तो अनुचित नहीं समझा जायगा। छह महीनेसे मैंने अन्न नहीं लिया, केवल फलों पर ही गुजर किया है। दूध-दहीको भी मैंने नहीं छुआ। मेरी खुराक, केले, मूँगफली, जेतूनका तेल (ओलिव आइल), नींबू या ऐसा ही कोई खट्टा फल, और खजूर हैं। मैं नहीं कहता कि यह प्रयोग बराबर फलीभूत हुआ है। ऐसे बड़े भारी फेरफारका प्रभाव जाननेके लिए छह महीने काफी नहीं हैं। परन्तु इतना तो कह सकता हूँ, कि जब औरऔर बीमार पड़े हैं तब मेरी प्रकृति ठीक रही है। मुझमें पहले जितनी मानसिक और शारीरिक शक्ति थी उससे ज्यादा बढ़ी है। शारीरिक शक्तिके सम्बन्धमें मैं कह सकता हूँ कि पहले जितना भार उठा सकता था उतना कदाचित् न भी उठे; परन्तु पहले जितने समय तक मैं मजदूरी कर सकता था उससे ज्यादा समय तक बिना थके अब कर सकता हूँ। कितने ही बीमारोंके लिए मैंने इस प्रकारके खुराककी आजमाइश की, उसका परिणाम बड़ा ही आश्चर्यकारी हुआ है। उसका वर्णन बीमारीके प्रकरणमें करनेकी इच्छा है। कहनेका मतलब यह है कि दूसरोंके और अपने निजी अनुभवसे, और जो कुछ पढ़कर विचार किया है उससे इतना जान पड़ता है कि फलाहार उत्तम खुराक है।

मै इस बातको नहीं मानता कि इस प्रकरणको पढ़कर कोइ फलाहारका प्रयोग करने लगेगा। मेरे इस लेखका असर शायद पढ़नेवालों पर हो; परन्तु मुझे तो सत्य लिखना है। मेरी ऐसी ही धारणा है। फिर मेरा यह कर्तव्य है कि जो कुछ मुझे ठीक जान पड़े वही मैं बतलाऊँ।

परन्तु किसी पढ़नेवालेके जीमें फलाहारका प्रयोग करनेकी इच्छा हो तो एकदम न कूदकर धीरे धीरे वे अभ्यासको बढ़ावें, यह उनके प्रति मेरी सूचना है। सब प्रकरणोंको पढ़नेके बाद सार खींच कर--समझ कर जो कुछ करना हो करना चाहिए।

अब अगले विभागमें हम दूसरे वर्गकी खुराकका विचार करेंगे। मैं मानता हूँ कि वह विशेष मान्य हो सकेगा। फलाहारका विभाग भी उस विभागके बाद ज्यादा अच्छी तरह समझ पड़ेगा।

जो इन प्रकरणोंको पढ़ रहे हों उनसे मेरी प्रार्थना है कि सब प्रकरणोंको पूरा किये बाद ही वे आन्तिम विचार करें।

दूसरे दर्जेकी खुराक वनस्पति है। इसमें शाक-भाजी, अन्न, द्विदल अन्न, और दूध आदिका समावेश होता है। जैसे फलाहारमें मनुष्यके लिए आवश्यक तत्त्व मिल जाते हैं वैसे ही वनस्पतिमें भी मिलते है। ऐसा होने पर भी दोनोंका असर एकसा नही होता। हमें जो तत्त्व खुराकसे मिलते हैं उनमेंसे कितने ही तो हवामें भी है। तथापि उन्हें हवामेंसे ग्रहण कर हम खुराकके बिना काम नहीं चला सकते। वनस्पतिको पकानेसे उसका असली तत्त्व नहीं रहता। वह निर्बल हो जाती है। परन्तु हम बहुत करके वनस्पतिको पकाये बिना नहीं खा सकते। यदि मनुष्यको पकाया हुआ अन्न खाना हो और शाक-भाजीके बिना काम नहीं चले तो यह विचार करना आवश्यक है कि उनमें कौनसी वस्तु अच्छी है।

सब अन्नमें गेहूं अच्छा है। अकेले गेहूंको खाकर मनुष्य निर्वाह कर सकता है। उसमें पोषण करनेवाली सब चीजें ठीक परिमाणमें हैं। उसकी अनेक जातिकी चीजें बन सकती है और सहजमें पचती है। बच्चोंके लिए जो तैयार खुराक मिलती है उसमें भी कुछ गेहूँका हिस्सा है। गेहूंकी श्रेणीमें, जुवार, बाजरी, जौ और मक्का भी है। यद्यपि ये गेहूंकी समता नहीं कर सकते तो भी इन सबकी रोटियाँ बन सकती

हैं। गेहूँको किस तरह खाना चाहिए यह बात समझने योग्य है। सफेद आटा, जिसे हम 'मिलफ्लावर' के नामसे जानते है, किसी कामका नही है। इसमें कुछ सत्त्व नहीं है। डाक्टर एलिन्सन प्रकट करते है कि उनने इस खुराक पर एक कुत्तेको रक्खा था, वह मर गया; परन्तु दूसरे आटेकी रोटी पर कुत्ता जिन्दा रहा था। सफेद आटेमेंसे गेहूँके छिलके निकाल लेते है और स्वाद और शक्ति छिलकोंमें ही होती है। सफेद आटेकी रोटी ज्यादा खपती है, इसका कारण तो यह जान पड़ता है कि मनुष्य जुदे जुदे स्वाद लेना चाहते हैं; और इस लिए ही वे सफेद रोटी खाते है। जिस भाँति कि चीझ * (पनीर) के खानेवालोंको पुष्टिकारक सत्व चीझमेंसे ही मिलता है; परन्तु वे उसे रोटीके साथ खाते है। ऐसे आटेकी रोटी अच्छी नहीं बनती। वह चमड़ेल होती है, उसमें स्वाद या गुण नहीं रहते। अच्छे-से-अच्छा आटा तो वह है कि जो ठीक तौर पर साफ किये हुए गेहूँको घर पर पीस कर बनाया हो और वह भी पत्थरकी चक्कीसे अपने हाथोंका पीसा हो। परन्तु जो पत्थरकी चक्की न मिल सके तो थोड़ी कीमतकी हाथसे चक्कर फेरनेकी चक्की घरमें रखकर अपने आप आटेको तैयार कर सकते हैं या बोयर-मिल लेकर उसका उपयोग कर सकते हैं। पीसे हुए आटेको बिना छाने काममें लाना चाहिए। इस तरहके आटेकी रोटी स्वाद और सत्ववाली होती है। और यह आटा सफेद आटेकी अपेक्षा ज्यादा दिन चलता भी है। क्योंकि उसमें विशेष सत्व होनेके कारण थोड़े ही आटेमें काम चल जाता है।

यह बात ध्यानमें रखने लायक है कि बाजारकी रोटी किसी कामकी नहीं। वे रोटियाँ सफेद और भूरी (ब्राउन) हों तो भी उनमें मिलावट होती है। एक बात और भी है। वह यह कि खमीर डालकर उस आटेकी रोटियाँ बनाई जाती है। यह बड़ा भारी दोष है। बहुतसे अनुभवियोंका

* यह एक यूरोपका खाद्य पदार्थ है।

कहना है कि ऐसे आटेकी रोटी नुकसान करती हैं। बाजारकी रोटियोंको तैयार करते समय चरबीसे चुपड़ते है। इससे वे हिन्दू और मुसलमानोंके लेने योग्य नहीं हैं । घर पर पकी हुई फुलकियों और रोटियोंको छोड़कर बाजारकी रोटियोंसे पेट भरना केवल आलस्यकी निशानी ही समझी जा सकती है।

गेहूँ खानेका दूसरा उत्तम और सहज उपाय यह है कि गेहूँको मोटे-मोटे दलकर उनका दलिया बनाकर खाना चाहिए। इस दलियेको पानीमें खूब बाफ कर उसमें दूध, घी, या शक्कर मिलाकर खाना चाहिए। इसका स्वाद भी अच्छा होगा और यह खुराक भी और खुराकोंसे अच्छी है।

चावलमें सत्व नहीं है। इस विषयमें सन्देह है कि अकेले चावल पर मनुष्यका निर्वाह हो सकता है या नहीं । उनके साथ दाल, घी, दूध, आदि पदार्थ हों तब ही निर्वाह हो सकता है। गेहूँको केवल पानीमें पकाकर उनके द्वारा मनुष्य तन्दुरुस्त रह सकता है।

शाक-भाजी हम खास कर स्वादके लिए खाते है। उसका गुण रेचक है। अतएव वह कुछ अंशमें रक्तका सुधार करती है। ऐसा होने पर भी वह कठिनाईसे पचती है, क्योंकि वह एक प्रकारका घास ही है। इससे कोठेको ज्यादा काम करना पड़ता है। सबको अनुभव होगा कि जो शाक-भाजी ज्यादा खाते है उनके शरीरका गठन निर्बल होता है। उन्हें हम पोचे बतलाते है। उन्हें वार वार अपचा होता है। वे अजीर्णकी दवा लिया ही करते हैं। यह हम अच्छी तरह देख सकते है कि कितनी ही शाक-भाजी तो बिल्कुल घास ही है। इससे यह बात याद रखनी चाहिए कि शाक-भाजी खानी चाहिए परन्तु बहुत ही कम।

चने, उड़द, मूँग, मोठ, मटर मसूर, तूर आदिकी दाल बहुत भारी खुराक है। इसे पचानेमें कठिनता पड़ती है। इसके लिए कोठेमें गहरी आग चाहिए। इन्हें खानेवाले मनुष्यको वार वार वायु सरता है। इसका अर्थ

यही हुआ कि पचन ठीक नहीं हुआ । इन वस्तुओंमें यह गुण अवश्य है कि ये बहुत समयतक रख सकती हैं । जिस मनुष्यको मजदूरी करनी पड़ती हो उसके लिए इनका खाना ठीक हो सकता है । उसे फायदा भी हो सकता है । परन्तु साधारणतया कम परिश्रम करनेवाले इन्हें ज्यादा नहीं खा सकते । मजदूर और गद्दी पर बैठनेवालोंकी खुराक समान नहीं हो सकती ।

डाक्टर हेग इग्लैंडका प्रख्यात लेखक है । उसने बहुतसे प्रयोग कर सिद्ध कर दिया है कि दालवाली चीजें बहुत ही खराब हैं । इनसे हमारे शरीरमें एक प्रकारका एसिड विष पैदा होता है और उससे हमें बहुतसे रोग पैदा होते है। जिनके कारण हम जल्दी ही बूढ़े हो जाते हैं । ऐसा होनेके उसने बहुतसे कारण बतलाये हैं, जिन्हें यहाँ लिखनेकी आवश्यकता नहीं है । मेरा निजी अनुभव यह सूचना देता है कि इन वस्तुओंके खानेमें नुकसान है । ऐसा होने पर भी जिनसे स्वाद न छोड़ा जाय उन्हें ऐसी वस्तु विचार कर खानी चाहिए ।

अब हमें इस बातका विचार करना योग्य है कि वनस्पतिमें कितनी चीजें छोड़नेके योग्य हैं। हिंदुस्तानमें लगभग सब जगह मिरच, मसाला, धनिया, जीरा, कालीमिरच वगैरह खानेकी बड़ी भारी चाल है । यह चाल और जगह नही है । यदि हम इस मसालेकी खुराक आफ्रिकाके हबसियोंको दें तो वे भी एका एक इसे न खायेंगे; क्योंकि उन्हें यह बे-स्वाद मालूम होती है । बहुतसे गोरे, जिन्हें मसालेकी आदत नहीं है, वे, हमारे मसालेदार भोजनको नही खा सकते और कदाचित् बे-वश उन्हें भोजन करना पड़े तो उनका कोठा खराब हो जाता है और उनके मुँहमें छाले पड़ जाते हैं । यह मैंने स्वयं कितने ही गोरोंके सम्बन्धमें अनुभव कर लिया है । इससे यह सिद्ध होता है कि मसाला स्वयं कुछ स्वादिष्ट नहीं है । परन्तु हमें बहुत कालसे आदत पड़ी हुई है, इससे हम

उसके गंध और स्वादको पसन्द करते हैं । परन्तु इस बातको तो हम समझ चुके कि स्वादके लिए खाना स्वास्थ्यको नुकसान पहुँचाता है।

तब हम मसाला खानेके कारणको ढूँढ़ें । सब कोई कुबूल करेंगे कि मसाला खानेका हेतु यही है कि खाना ज्यादा खाया जा सके और पचे भी ज्यादा । मिरच, धनिया, जीरा वगैरहमें पेटमें विशेष अग्नि उत्पन्न करनेका गुण है और इससे हमें विशेष भूख लगती हुई जान पड़ती है। इसका यह अर्थ करना भूल है कि खाया हुआ भोजन सबका-सब पच गया और उसका उत्तम रक्त बन गया । बहुतसे मनुष्योंका, जो बहुत मसाला खाते है, कोठा खराब हो जाता है और कितनेहीको संग्रहणी भी हो जाती है। एक मनुष्यको बहुत मिरच खानेकी बड़ी भारी टेव थी । वह उसे छोड़ न सका और जवानीमें छह महीने बिस्तर पर पड़ा रह कर मर गया । इस लिए अपनी खुराकमेंसे मसालेको उड़ा देना चाहिए।

जो बात मसालेके लिए कही गई है वही नमकके लिए भी कही जा सकती है । यह बात किसीको पसन्द न पड़ेगी । बहुतोंको तो भयंकर जान पड़ेगी, परन्तु यह अनुभव-सिद्ध है । विलायतमें एक मंडली कायम हुई है । उसका मत है कि नमक बहुतसे मसालोंसे भी खराब वस्तु है। हमारी खुराकमें हमें वनस्पति-जन्य नमक मिलता है वह काफी है और उसकी आवश्यकता है । समुद्रका या खानका नमक अनावश्यक है। यह जैसा शरीरमें जाता है वैसा ही पसीनेके रास्तेसे या दूसरे मार्गसे बाहर निकल जाता है । इसका खास उपयोग शरीरमें होता हुआ नहीं जान पड़ता। एक पुस्तकमें तो यहाँतक लिखा है कि नमकसे रक्त बिगड़ता है। जिसने वर्षोंसे नमक न लिया हो और अन्य भाँतिसे रक्तको खूब स्वच्छ रक्खा हो उस पर साँपके काटनेका कुछ असर नहीं होता । कारण कि उस रक्तमें ऐसे दंशोंके प्रभावको दूर करनेकी शक्ति होती है । यह बात ठीक है या नहीं, इसे मैं नहीं जानता; परन्तु इतना तो मैं अपने अनुभवसे

कह सकता हूँ कि खाँसी, अर्श, दम, रक्त-प्रवाह वगैरह बीमारियोंकी हालतमें नमक छोड़ दिया जाय तो इसका असर तत्काल होगा। एक हिंदुस्तानीको बहुत समयसे दम और खाँसीकी बीमारी थी । वह नमक छोड़कर इलाज करनेसे मिट गई । मैंने न सुना है और न अनुभवसे जाना है कि नमक छोड़नेसे किसी पर बुरा असर पड़ा हो । मुझे तो नमक छोड़े हुए दो-वर्ष होगये तो भी कुछ बुरा असर न पड़ा, बल्कि फायदा हुआ है । पानी कम पीना पड़ता है और सुस्ती कम रहती है। मुझ पर नमक छोड़नेका जो प्रसंग आया वह विचित्र ही है। जिसकी बीमारीके लिए मैंने नमक छोड़ा उसकी बीमारी सदा थँभी रही है । अगर वह बीमार सर्वथा नमक छोड़ देता तो मेरा विश्वास है कि उसकी बीमारी बिल्कुल निर्मूल हो जाती।

नमक छोड़नेवालेको दाल और शाक-भाजी छोड़नी पड़ती है। मैंने बहुतसे प्रयोगोंमें देखा है कि यह बात कठिन हो पड़ती है । परन्तु हरी तरकारी और दाल छोड़े बिना काम नहीं चल सकता । मुझे ऐसा जान पड़ा कि नमकके बिना दाल-शाकका पचाना कठिन हैं । इसका यह मतलब नहीं है कि नमक पाचन-शक्तिको बढ़ानेवाली वस्तु हैं; परन्तु जैसे मिरच खानेसे पाचन-शक्ति बढ़ती नहीं—बढ़तीसी जान पड़ती है और अन्तमें नुकसान होता है, वही हाल नमकका भी है । नमक छोड़नेवालेको दाल-शाक अवश्य छोड़ देना चाहिए । इस प्रयोगको सब कोई अपने ऊपर ही आजमा कर उसके असरको देख सकते हैं । जैसे अफीम छोड़नेवालेको थोड़े दिन तक कष्ट मालूम होता है और शरीर शिथिलसा जान पड़ता है वैसा ही नमक छोड़नेवालेको भी जान पड़ेगा । परन्तु इससे विचलित होनेकी कोई जरूरत नहीं है । धैर्य रखनेसे नमक छोड़नेवालेको लाभ ही पहुँचेगा ।

इस लेखकने दूधको भी छोड़ने योग्य वस्तुओंमें गिननेकी हिम्मत की है । इसका आधार उसका निजी अनुभव है। परन्तु उस अनुभवके जिकर

करनेकी आवश्यकता नहीं । दूधके माहात्म्यके सम्बन्धमें हम लोगोंको एक ऐसा भ्रमस हो गया है कि उसे निकालनेका यत्न करना व्यर्थ है। इस लेखकको इस बातका भरोसा नहीं है कि इस पुस्तकमें बतलाये हुए विचारोंको, पढ़नेवाले कुबूल करेंगे, और न यही भरोसा है कि जिन्हें ये विचार पसन्द पड़ेंगे वे सब इन पर अमल करेंगे । लेखकका मतलब केवल विचारोंको प्रकट करना है । इनमेंसे जिन्हें जो पसन्द पड़ेंगे वे उन्हें ग्रहण करेंगे । अत एव दूधके सम्बन्धमें लिखना अयोग्य नहीं जान पड़ता बहुतसे डाक्टरोंने लिखा है कि दूध काल-ज्वर पैदा करनेवाली वस्तु है । इसके सम्बन्धमें बहुतसी पुस्तकें और मासिक पत्र प्रकट हुए हैं । दूधमें तुरत हवाके जन्तु पड़ जाते हैं और तुरंत ही हानिकारक जन्तु पैदा हो जाते हैं । दूधको ठीक रखनेके लिए बहुत झंझट करनी पड़ती है । दक्षिण-आफ्रिकामें दूधके कारखानोंके सम्बन्धमें कई कायदे बने हुए है। दूधको कैसे स्वच्छ रक्खा जाय, बर्तन कैसे साफ किये जायँ, कैसे रक्खें जायँ इत्यादि विषयकी बहुतसी सूचनायें हैं । इस तरह जिस वस्तुके लिए बहुतसे यत्न करने पड़ें और कुछ भूल हो जाय तो नुकसान उठाना पड़े उस वस्तुको छोड़ना चाहिए या रखना यह बात विचार करने योग्य है ।

और गाय कैसी है, वह क्या खाती है, इस बात पर अच्छे-बुरे दूधका आधार है । क्षय-रोगसे पीडित गायका दूध पीनेसे क्षय हो जानेके उदाहरण अनेक वैद्योंने दिये है । बिल्कुल तन्दुरुस्त गायका मिलना कठिन है । यदि गाय तन्दुरुस्त न हो तो उसका दूध नीरोग नहीं हो सकता । इस बातको सब कोई जानते हैं कि बीमार माँके दूध पीनेवाले बच्चे भी बीमार हो जाते हैं । दूध पीनेवाले बच्चेको बीमारी होती है तो वैद्य बच्चेको दवा न देकर उसकी माँको देते हैं। कारण कि दवाका असर दूधके द्वारा बच्चे पर हो जाता है । इसी तरह गायके दूधका उसके

पीनेवाले पर असर पड़ता है। और उसी भाँति गायके स्वास्थ्य और अस्वास्थ्यका भी उसके दूध पीनेवाले पर प्रभाव पड़ता है। जिस दूधमें ऐसी विटम्बना और इतनी जोखम है क्या वह छोड़ने योग्य नहीं है ? शक्ति देनेका जो गुण दूधमें है वह बहुतसी चीजोंमें है । कई अंशोंमें जेतूनके तैलसे इसकी गरज निकल सकती है। बादामकी मींगीको गरम पानीमें भिगोकर उनकी छालको दूर कर देना चाहिए । फिर उन्हें पीस कर पानीमें एक रस करलेना चाहिए। इसमें दूधके सारे गुण होते है और दूधसे उत्पन्न होनेवाली खराबियाँ नहीं होतीं । अच्छा कुदरतके नियमकी ओर ध्यान दीजिए। बछड़े थोड़े महीने दूध पीकर छोड़ देते हैं और दाँत आते ही ऐसी चीजोंका खाना शुरू कर देते हैं कि जो दाँतोंसे खाई जा सके। यही बात मनुष्य-जातिके लिए भी होनी चाहिए। हम केवल बचपनमें दूध पीनेको बने हैं। हमारे दाँत आवें तब हमें सेव वगैरह हरा मेवा और बादाम वगैरह सूखा मेवा या रोटी चबानी चाहिए। दूधकी गुलामीमेंसे छूटनेवाला मनुष्य कितना पैसा और समय बचा सकता है इसका निर्णय करनेका यह स्थान नही है। परन्तु इस बातका निर्णय मनुष्य स्वयं कर सकेंगे कि दूधसे पैदा होनेवाली चीजोंकी भी अवश्यकता नहीं है। छाछकी खटाई नींबूसे मिलती है। उसके अन्यान्य सत्व बादाम वगैरहसे मिलते हैं। घीकी एवजमें तैलका उपयोग तो हजारों हिन्दुस्तानी करते हैं।

अब तीसरे दर्जेकी खुराककी जाँच कीजिए। यह वनस्पति और मांसके मेलकी खुराक है। बहुतसे मनुष्य इस खुराकको खाते हैं। उनमेंसे बहुतसे अनेक रोगोंसे पीड़ित हैं और बहुतसे नीरोग भी जान पड़ते हैं। हम मांस खानेके लिए नहीं पैदा हुए इस बातको तो हमारे अवयव और हमारे शरीरकी रचना प्रत्यक्ष दिखला रही है। डाक्टर किंग्सफोर्ड और डाक्टर हेगने इस बातका वर्णन अच्छी तरह कर दिखलाया है कि

मांस खानेसे शरीर पर बुरा असर होता है । दाल खानेसे जो एसिड् पैदा होता है वही मांस खानेसे भी होता है । मांस खानेसे दाँतोंको नुकसान होता है, सन्धि-वात होता है, और क्रोध खूब चढ़ने लगता है । जिस मनुष्यको क्रोध आता है वह भी रोगी है। हमारी आरोग्यकी व्याख्याके अनुसार क्रोधी मनुष्य नीरोगी नही कहा जा सकता ।

चौथे और अन्तिम दर्जेकी खुराक खानेवाले केवल मांस भोजी होते हैं । उनका विचार करनेकी कोई आवश्यकता नही है । उनकी दशा ऐसी खराब है कि जिसका विचार करने पर हम कभी मांसको न खावेंगे। वे किसी तरह नीरोगी नहीं है । वे जरा उन्नत होते हैं या ज्ञान प्राप्त करते हैं कि तुरंत उनका चित्त वनस्पतिके आहारकी ओर दौड़ता है ।

इन सब बातोंका सार यह निकला कि केवल फलाहार करनेवाले थोड़े ही निकलेंगे । परन्तु हरे और सूखे फल, गेहूँ और ओलिव-आइल-का प्रयोग करनेके योग्य है । इस पर मनुष्य अपनी तन्दुरुस्ती कायम रख सकता है । फलोंमें केले मुख्य है । इसके सिवाय खजूर, आलू-बुखारे, अंजीर आदि ये सब शक्ति देनेवाले हैं । अंगूर खून सुधारते हैं । नारंगी, सन्तरे, सेव और केलेको एकत्र कर रोटियोंके साथ खा सकते है । रोटियोंमें जेतूनका तेल डालनेसे स्वाद खराब नहीं होता । ऐसे खुराकमें अड़चन कम होती है और इसीसे खर्च भी कम होता है । नमक, मिरच, दूध या शक्करकी जरूरत नहीं पड़ती । कोरी शक्कर तो बिल्कुल खराब चीज है। बहुत मीठा खानेवालेके दाँत शीघ्र ही गिर जाते है । ज्यादा मीठेसे कुछ लाभ भी नहीं है । गेहूँ, बादाम, मूँगफली, अखरोट, और हरे मेवेसे अनेक खाने योग्य पदार्थ बनाये जा सकते हैं ।

खुराक कितनी और कितनी वार खानी चाहिए यह बात अब विचार करनेके लायक है । इसका अगले प्रकरणमें विचार करते हैं।

खुराक कितनी और कितनी वार खानी चाहिए ।

खुराक कितनी खानी चाहिए इस विषयमें डाक्टरोंमें बड़ा मत भेद है। एक डाक्टरका कहना है कि खूब खानी चाहिए। उसने अलग-अलग खुराकके गुणोंके मुआफिक वजन दिये है। दूसरे डाक्टरका कहना है कि मजदूरी करनेवाले और मानसिक श्रम करनेवालेको जुदी-जुदी जातिकी खुराक जुदे-जुदे परिमाणमे लेनी चाहिए। तीसरेका कहना है, कि क्या मजदूर और क्या धनी दोनोंको समान खुराक चाहिए। यह कोई नियम नही है कि गादीधरोंको थोड़ी और मजदूरोंको ज्यादा खुराक हो तभी काम चले। इस बातको तो सभी जानते है कि सबल और निर्बलकी खुराकका वजन एक नहीं हो सकता। स्त्री और पुरुषके आहारमें भेद होता है। बड़ों और बच्चोंके आहारमें भेद रहता है। जवान और बूढ़ोंके आहारमें अन्तर रहता है। आखिरके एक लेखकका तो यहाँ तक कहना है कि जो खुराकको हम इतना चबावें कि वह बिल्कुल रस होकर थूँककी तरह अपने आप गले उतर जाय तो हमारा काम ८–१० रुपये भर खुराकसे ही चल सकता है। इस लेखकने हजारों प्रयोग करके देखे हैं। उसकी पुस्तकोंकी हजारों प्रतियॉ खपती हैं और बहुत पढ़ी जाती है। ऐसी स्थितिमें कितना खाना चाहिए इसका वजन बतलाना व्यर्थ है।

करीब करीब सब डाक्टरोंने लिखा है कि, ९९/१०० मनुष्य आवश्यकतासे अधिक खाते है। डाक्टरोंने न लिखा होता तो भी यह बात ऐसी साधारण है कि हम भी समझ सकते है। ऐसी सूरतमें इस भयसे, कि कोई कम खाकर अपनी तबीयतको खराब न करले, इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि कम-से-कम कितना खाना चाहिए। वास्तवमें देखा जाय तो यह

कहनेकी आवश्यकता है कि जब हम खुराकका विचार ही कर रहे है तब अपनी खुराकको कम करनी चाहिए।

ऊपर कहे मुआफिक खुराकको खूब चबाकर खानेकी आवश्यकता है। वैसा करनेसे बहुत थोड़ी खुराकमेंसे हम ज्यादासे-ज्यादा सत्व ग्रहण कर सकेंगे और हमें हर तरहसे फायदा होगा। ऐसा बतलाया गया है कि जो मनुष्य पच जाय उतनी ही खुराक खाता है उसका दस्त, थोड़ा, बँधा हुआ, कालोस लिया हुआ, चिकना, सूखा और दुर्गन्धसे बिल्कुल मुक्त होता है। जिसे ऐसा दस्त नहीं होता समझना चाहिए कि उसने ज्यादा खाया है, अयोग्य खुराक खाई है और उसे खूब अच्छी तरह चबा-चबाकर थूँकके ऐसी नहीं बनने दिया है। इस तरह मनुष्य अपने दस्त आदिसे जान सकता है कि उसने ज्यादा खाया है या कम। जिसने ज्यादा खाया होता है वह बेचेनीसे सोता है, उसे स्वप्न आते हैं और प्रातःकालमें उसकी जीभ बिगड़ी हुई होती है। जो प्रवाही पदार्थोंको बहुत खाता-पीता है उसे रातमें पेशाब करनेको बहुत उठना पड़ता है। इस तरह बारीकीके साथ देख कर मनुष्य अपनी अपनी खुराकका वजन कर सकेगा। बहुतसे मनुष्योंके श्वासमें बदबू होती है, समझना चाहिए उसे अवश्य खुराक हज्म नहीं हुई। कितनी ही वार ज्यादा खाने-वालोंके फोड़े-फुंसी हो जाते है। खीलें निकला करती हैं। नाकमें फुंसी हो जाती है। इन उपद्रवोंकी हम परवा नहीं करते। कितनेको डकारें आया करती है और कितनेहीको वायु सरा करती है। इन सब बातोंका अर्थ यह हुआ कि हमारा पेट पाखाना हो गया है और हम पाखानेकी पेटीको अपने साथ साथ लिये फिरते हैं। यदि हमें अवकाश हो और हम इन बातों पर विचार करें तो हमें अपनी आदतों पर तिरस्कार उत्पन्न हुए बिना न रहेगा। हम ज्यादा खाना सर्वथा छोड़ देंगें और खाने-पीने तथा ज्यौनारोंकी बात भी न करेंगे। हमारी मेहमा-

नदारी और ही प्रकारकी हो जायगी और हम स्वयं सुखी रह कर मेहमा-मानको सुखी करेंगे। दावतका तो नाम भी न लेंगे। हम दतौन करनेके लिए किसीको नौता नहीं देते और न पानी पीनेके लिए ही किसीको नौता देते हैं। उसी भाँति भोजन करना भी एक शारीरिक व्यवहार है, फिर इसके लिए क्यों आकाश-पाताल करना चाहिए? मेहमान आये कि हमारी और मेहमान दोनोंकी कमबख्ती आई। यह क्यों? उत्तर यह है कि— हमने ज्यादा आदतोंसे अपने मुँह बिगाड़ लिये है। इससे कुछ-न-कुछ खानेके बहाने ढूँढ़ते रहते है। मेहमानको खूब भोजन करा कर उसके यहाँ खूब खानेकी इच्छा करते है। और एक बात है कि हम ऐसे-ऐसे मौके ढूँढकर खूब खानेकी इच्छा करते है। इस तरह खालेनेके एक घंटे बाद ही यदि हम अपना मुँह किसी शुद्ध शरीरवालेको सूँघनेके लिए कहें और उसके विचार सुनें तो हमें शरमाना पड़ेगा। ऐसे भी शौकीन खाने-वाले पड़े है कि अच्छा खानेके लिए, भोजन कर तुरंत फ्रुटसाल्ट पियेंगे और उलटी करके फिर खानेको बैठेंगे।

हम सबकी थोड़ी या बहुत ऐसी ही स्थिति है। इस लिए हमारे महा पुरुषोंने हमारे लिए उपवास, रोजे आदि व्रत ठहराये हैं। रोमनकेथलिक क्रिश्चियनोंमें भी बहुतसे उपवास है। केवल शरीरके आरोग्यके लिए मनुष्य हर एक पक्षमें उपवास या एकाशन करे तो कुछ भी बुरा नहीं है। उसे बड़ा ही फायदा होगा। चौमासेमें बहुतसे हिन्दू एक वार खानेका व्रत लेते हैं। इसमें आरोग्य भरा हुआ है। जब हवामें नमी हो, सूर्य न देख पड़ता हो तब कोठा कम काम करता है। अतएव ऐसे समयमें कम खाना चाहिए।

अब यह विचार करते है कि कितनी वार खाना चाहिए। हिन्दुस्ता-नमें प्रायः मनुष्य दो ही वार खाते हैं। तीन वार खानेवाला मजदूरोंका दल है। और जो चार वार खानेवाले हैं जान पड़ता है वे अंग्रेजी दूका

चलनेके बाद पैदा हुए है। हालमें अमेरिका और इंग्लैंडमें ऐसी सभायें स्थापित हुई हैं, जिनका काम यह है कि वे मनुष्योंको दो वारसे ज्यादा न खानेका उपदेश दें। इन सभाओंका कहना है कि हमें सुबहका कलेवा न करना चाहिए। रातकी निद्रा कलेवेका काम करती है। प्रातः-कालके समय हम भोजन करनेके लिए नहीं, किन्तु काम करनेको तैयार होते हैं। उनका मन्तव्य है कि एक पहर काम कर चुके बाद ही हम खाने योग्य होते हैं। ऐसे मनुष्य दिनमें दो वार ही खाते है। वे बीचमें चाय आदि भी नहीं पीते। इस विषय पर प्रसिद्ध डाक्टर ड्यूईने एक पुस्तक लिखी है। उसमें कलेवा छोड़ने, कम खाने और उपवास करनेके लाभ बड़ी अच्छी तरह बताये है। आठ वर्षसे मेरा भी यही अनुभव है कि युवावस्थाके बाद दो वक्तसे ज्यादा खानेकी जरूरत बिल्कुल नहीं है। मनुष्यके शरीरका संगठन हो चुके बाद उसे बहुत वार खानेकी आवश्यकता नहीं है और न बहुत खानेकी ही आवश्यकता है।

६ कसरत ।

मनुष्य जातिके लिए हवा, पानी और खुराककी जितनी जरूरत है उतनी ही जरूरत कसरतकी भी है। इतना सही है कि कसरतके बिना आदमी जितने कालतक रह सकता है उतने कालतक हवा, पानी और खुराकके बिना नहीं रह सकता, तथापि यह बात सर्वमान्य है कि कसरतके बिना वह नीरोग नहीं रह सकता। जैसे हमने खुराकका अर्थ किया है वेसे ही कसरतका अर्थ करनेकी आवश्यकता है। गिल्ली-दंडे, फुटबॉल, क्रिकेट या घूमना ही कसरत नही है। शारीरिक और मानासिक कामको कसरत कहते हैं। जैसे शरीर और मन दोनोंके लिए खुराककी आवश्यकता है वैसे ही तन और मनके लिए कसरत आवश्यक है। तनको कसरत न मिलेगी तो तन बीमार रहेगा और मनको कसरत न मिलेगी तो मन शिथिल रहेगा। मूर्खताको एक प्रकारका रोग ही समझना चाहिए। एक बड़ा भारी पहलवान जो खूब कुश्ती कर सकता हो परन्तु मन यदि उसका गॅवारके ऐसा हो तो हम उसे नीरोगी शब्दसे नहीं कह सकते। अंग्रेजीमें एक कहावत है कि उसी मनुष्यको नीरोग कह सकते हैं जिसके तन्दुरुस्त शरीरमें मन दृढ़ और आरोग्य हो।

ऐसी कसरतें कौनसी हैं ? कुदरतने तो हमारे लिए ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया है कि हम सदा कसरत ही करते रहें। जरा शान्तिके साथ देखेंगे तो हमें मालूम होगा कि दुनियाँका बहुत बड़ा हिस्सा खेती पर निर्वाह करता है। किसानके सब घरवाले कसरत करते हैं। वे प्रतिदिन आठ-दस घंटे या इससे भी ज्यादा समय तक खेतोंमें काम करें तभी उन्हें खाने-पीने और पहननेको मिलता है। उन्हें दूसरे मानसिक व्यायामकी आवश्यकता नहीं है। किसान मूर्ख-दशामें काम ही नहीं कर सकता। उसे जमीनकी परख और ऋतुओंके फेरफारका ज्ञान होना ही चाहिए,

युक्ति पूर्वक हल चलानेकी योग्यता और साधारणतया सूर्य, चन्द्र और ताराओंकी गतिसे जानकारी होनी ही चाहिए। शहरका रहनेवाला मनुष्य चाहे जैसा बुद्धिमान् क्यों न हो वह जब किसानके घर जाता है तब अपनेको अत्यन्त ही अनभिज्ञ पाता है। किसानको अच्छे बुरे बीजकी पहचान होती है, उसे आस पासके रास्तोंका ज्ञान होता है, आस-पासके मनुष्योंको वह पहचानता है, तारोंको देख कर रातमें दिशा बतला सकता है, और पशु-पक्षियोंकी गति और आवाजसे कितनी ही बातोंको वह समझ लेता है। अमुक पक्षी अमुक समयमें इकट्ठे हों या कलोल करें तो वह कहेगा कि, ये वर्षाके चिन्ह हैं या कुछ और निशानी है। इस तरह किसान अपने काम लायक खगोल, भूगोल, भूस्तर आदि विद्या जानता है। वह अपने बाल-बच्चोंका भरण-पोषण करता है अत एव मानव-धर्म-शास्त्रका भी उसे साधारण ज्ञान रहता है। इस पृथ्वीके विशाल भागमें वह रहता है अत एव ईश्वरके महत्त्वको समझता है। शरीरसे वह दृढ़ होता ही है। अपना इलाज आप ही कर लेता है। और मानसिक शिक्षा उसे ऊपरकी भाँति मिली हुई होती है सो हम पढ़ ही चुके है।

परन्तु किसान ही सब कुछ नही है और ये प्रकरण किसानोंके उपकारके लिए लिखे भी नहीं गये। सवाल यह है कि जो व्यापारी या ऐसे ही कुछ धंदा करनेवाले है उन्हें क्या करना चाहिए? इस सवालका अच्छी तरह जबाब दिया जा सके इसके लिए किसानकी जिन्दगीका बयान किया है। जो किसान नहीं है वे अपने जीवनको ऐसा बना सकते है, और यह भी समझ सकते हैं कि जब तक हमारा जीवन ऐसा न होगा तब तक हम पूर्ण नीरोग नही हो सकते। किसानके जीवनसे हम समझ सकते हैं कि मनुष्यको आठ घंटेतक शारीरिक श्रम करना चाहिए और वह भी ऐसा कि जिसके करते करते ही मनकी शक्तिको भी कसरत मिले। व्यापारी वगैरहको कुछ मनकी कसरत मिलती

है सही परन्तु वह एक ही तरहकी होती है । ये लोग कुछ किसानकी तरह खगोल, भूगोल, इतिहास आदिके वेत्ता नहीं होते । इन्हें भाव आदिका ज्ञान हो सकता है, ये माप-तोल जान सकते हैं, ग्राहकोंको युक्ति पूर्वक माल देनेकी कला संपादन कर सकते है, परन्तु इन बातोंसे पूरे तौर पर मनको कसरत नही मिलती । इस धंदेमें कुछ शरीरकी हल चल होती है परन्तु बहुत ही कम ।

ऐसे मनुष्योंके लिए पश्चिमके लोगोंने क्रिकेट आदि खेल खोज निकाले है । त्यौंहारोंके समय विशेष खेल खेले जाते हैं । मानसिक कसरतके लिए सहजमें समझ पड़नेवाले ग्रन्थोंका पढना बतलाया गया है । यह एक मार्ग है । इस पर जरा विचार करें । इसमें सन्देह नहीं है कि इन खेलोंमें समय लगानेसे कसरत होती है, परन्तु मनका सुधार नही होता । इस बातको हम अनेक उदाहरणोंमें देख सकते हैं । क्रिकेट या फुटबॉलके खिलाड़ियोंकी संख्याके परिमाणमें कितने मनुष्य उत्तम मानसिक शक्तिवाले हैं ? हिंदुस्तानके राजे बड़े खिलाड़ी है उनके मानसिक बलके सम्बन्धमें हमने क्या देखा है ? और जो बड़े भारी मानसिक शक्तिवाले हैं उनमें कितने खिलाड़ी है ? अनुभवसे जाना जाता है मानसिक शक्तिवाले बहुत ही कम खिलाड़ी देखनेमें आवेंगे । विलायतके गोरे अभी खूब खेलने लगे हैं । उन्हें उन्हींके कवि किप्लिंगने अकलके शत्रु कह कर वर्णन किया है और कहा है कि ये इंग्लेंडके दुश्मन होंगे । हिन्दुस्तानके मानसिक शक्तिवालोंने दूसरा ही मार्ग ग्रहण किया जान पड़ता है । वे जितना मानसिक श्रम करते है उसके मुकाबिलेमें शरीरकी बहुत ही कम कसरत करते हैं, या बिल्कुल नहीं करते । ऐसे शख्सोंसे हम हाथ धो बैठते हैं । अकेले मगज भारी करनेसे उनके शरीर क्षीण हो जाते हैं । उनके शरीरमें कोई न कोई रोग घर कर बैठता है । जब उनका अनुभव देशके काम आने लगता है तब वे देह त्याग कर चल बसते हैं । इससे हम जान सकते हैं कि अकेली मनकी कसरत या शरीरकी कसरत काफी

नहीं है। इसी तरह निरुपयोगी कसरत–जो खेलमें होती है, योग्य नहीं समझी जा सकती। सच्ची कसरत तो वही है जिसमें तन और मन दोनोंका निरंतर विकास हो। ऐसी कसरत करनेवाला मनुष्य ही तन्दुरुस्त रह सकता है और ऐसा मनुष्य किसान है।

अब जो किसान नहीं है वह क्या करे? क्रिकेट, फुटबॉल आदि खेलोंसे मिलती हुई कसरत अच्छी नहीं है। अत एव हमें ऐसी कसरत खोज निकालनी चाहिए कि जिससे किसानके समान मतलब निकल सके। व्यापारी और दूसरे मनुष्य अपने घरके आस-पास बगीचा बना कर उसमें दो चार घंटे रोज खोदने आदिका काम कर सकते हैं। फेरीवाले वगैरह अपने धंदेमें ही कसरत पा जाते है। यदि हम दूसरेके घरमें रहते हों तो यह सवाल ही न उठाना चाहिए कि हम दूसरोंके घरमें क्यों खोदनेकी मेहनत करें और बगीचा लगावें। ऐसा विचार तुच्छ मनकी निशानी है। चाहे जिसकी जमीनमें हम खोदने-बोनेका काम करेंगे तो हमें लाभ ही होगा। हमारे घर होंगे तो सुधरेंगे और दूसरोंके घर होंगे तो उन्हें ठीक रखनेका संतोष प्राप्त करेंगे। जिन्हें जमीनकी कसरत न मिले या जिन्हें यह किसी भी तरह पसन्द न पड़े उन्हें दो शब्द कहनेकी आवश्यकता है। जमीनमें काम करनेकी कसरतके सिवाय सर्वोत्तम कसरत चलनेकी है। यह सब कसरतोंकी राजा है। हमारे फकीर और साधु बहुत तन्दुरुस्त रहते हैं। इनके तन्दुरुस्त रहनेके कारणोंमें एक यह भी कारण है कि वे गाड़ी-घोड़े आदि सवारियोंका उपयोग नही करते। वे अपनी यात्रा पैरोंसे करते हैं। थोरो नामके एक प्रसिद्ध अमेरिकनने चलनेकी कसरत पर बहुत ही विचार करने योग्य पुस्तक लिखी है। उसने लिखा है कि जो मनुष्य वक्त नही मिलनेके बहानेसे बाहर नहीं निकलता, चलता फिरता नही है, और सदा लिखने-पढ़नेके काममें लगा रहता है, उसके लेख आदि भी वैसे ही मुरदार होते हैं जैसा कि वह बीमारसा रहा करता है। उसने स्वय अपने अनुभवके विषयमें लिखा है कि जिस समय मै ज्यादा-से-ज्यादा चलता था तभी मैंने उत्तम–

से-उत्तम पुस्तकें लिखी हैं । चार-पाँच घंटे चललेना तो कोई बात ही न थी । जब हमें खूब भूख लगती है तब हम भोजन करते हैं । यही बात कसरतके लिए होनी चाहिए । हमें मानसिक कामोंका माप करना नहीं आता, इससे हम नहीं देख पाते कि शारीरिक कसरतके बिना किये हुए मानसिक काम नीरस और निःसत्व होते हैं । चलनेसे रक्त सब भागोंमें शीघ्रतासे चक्कर लगाता है, प्रत्येक अंगमें हलन-चलन होती है और सारा शरीर कसाता है । चलनेसे हाथ पैर तो हिलते ही है । इसके सिवा हमें शुद्ध हवा मिलती है और उत्तमोत्तम दृश्य भी देख पड़ते है । घूमना गलीमें या एक ही जगह न होना चाहिए; किन्तु खेतोंमें या जंगलमें घूमना चाहिए । इससे हम कुदरती सौन्दर्यकी कुछ कीमत कर सकेंगे । एक-दो मील चलना कुछ चलना नही है । दस-बारह मील चलना कुछ चलना कहा जा सकता हैं । जो ऐसा सदा नहीं कर सकता वह रविवारको खूब चल सकता है । एक बीमार एक अनुभवी वैद्यके यहाँ गोली लेनेको गया । उसे अजीर्णका रोग था । वैद्यने उसे सलाह दी कि थोड़े-थोड़े घूमा करो । बीमारने कहा कि मुझमें शक्ति नहीं है । वैद्यने समझा कि बीमार कम-हिम्मत है । वह उस बीमारको अपने साथ गाड़ीमें बैठाकर घूमनेको ले गया । रास्तेमें जान-बूझ कर वैद्यने चाबुक गिरा दिया । सभ्यताके लिहाजसे बेचारा बीमार चाबुक लेनेको उतरा । वैद्यने गाड़ी तेज करदी । लाचार बीमारको हाँपते-हाँपते गाड़ीके पीछे पीछे जल्दी जल्दी चलना पड़ा । बीमारको खूब चलाये बाद वैद्यने गाड़ीको लौटाकर उसमें बीमारको बिठला लिया और कहा कि रोगका इलाज चलाना ही था । इसी लिए इस क्रूर व्यवहारकी जोखम उठा कर भी मैने आपको चलाया है । बीमारको भी तब जोरकी भूख लग आई थी । इससे वह चाबुकके व्यवहारको भूल गया । वह वैद्यका उपकार मानकर घर गया और वहाँ पर बड़े संतोषसे उसने भोजन किया । जिन्हें बदहज्मी और उससे होनेवाले रोग हों उन्हें चाहिए कि वे चलनेके प्रयोगको आजमा देखें ।

७ पोशाक ।

जैसे खुराक पर तन्दुरुस्तीका आधार है वैसे ही कई अंशोंमें पोशाक पर भी है। गौरी औरतें अपनी शोभाके लिए ऐसी पोशाक पहनती हैं कि जिससे उनके पैर और कमर तंग रहें। इससे उन्हें कई तरहकी बीमारियाँ हो जाती हैं। चीनमें औरतोंके पैरोंको इतने छोटे कर दिये जाते है कि हमारे बच्चोंके पैर भी उनके पैरोंसे बड़े होते हैं। इससे चीनकी औरतोंके स्वास्थको बड़ा धक्का पहुँचता है। इन दो उदाहरणोंसे पढ़नेवाले समझ सकते है कि कुछ अंशमें हमारे स्वास्थ्यका आधार पोशाक पर भी है। बहुत अंशोंमें पोशाकका पसन्द करना हमारे हाथमें नहीं रहता। हम अपने बड़े-बूढ़ोंकी पोशाकको पहनते है और वर्तमानमें ऐसा करनेकी जरूरत भी है। पोशाकका मुख्य उद्देश क्या है उसे भूल कर अब पोषाकसे हमारा धर्म, हमारा देश और हमारी जाति आदि जाने जाते हैं। मजदूर, मास्टर, कारबारी आदिकी पोशाक भी जुदी ही जातिकी होती है। जहाँ ऐसी स्थिति है वहाँ पर आरोग्यके सम्बन्धमें विचार करना कठिन बात है, तथापि विचार करनेसे कुछ फायदा ही होगा।

पोशाक शब्दमें जूते और जेवरका भी समावेश समझना चाहिए। अब हम देखें कि पोशाकका मूल हेतु क्या है। अपनी कुदरती स्थितिमें मनुष्य बिल्कुल वस्त्र नहीं पहनता। स्त्री-पुरुष केवल अपने गुह्यभागको ढक लेते हैं, बाकी सारा शरीर खुला रखते है। इससे उनका चमड़ा कठिन और मजबूत हो जाता है। एकाएक उन्हें सरदी आदि नहीं होती। हवाके प्रकरणमें हम देख चुके हैं कि हम नथुनोंसे ही हवा नहीं लेते, त्वचामें रहे हुए असंख्य छिद्रोंसे भी हवा लेते है। पोशाक पहन कर हम त्वचाके इस काममें बाधा पहुँचाते हैं। शीत-प्रधान देशके मनुष्य

ज्यों ज्यों आलसी होते गये त्यों त्यों उन्हें शरीर ढकनेकी आवश्यकता जान पड़ी। वे ठंडको सहन न कर सके। अखीरमें पोशाकका रिवाज चल पड़ा । लागोंने उसे श्रृंगार समझ लिया और फिर इससे जातिकी पहचान होने लगी ।

वास्तवमें देखा जाय तो कुदरतने चर्मके रूपमें मनुष्यको योग्य पोशाक पहनाई है। नग्न शरीर कुरूप देख पड़ता है ऐसा मानना हमारा भ्रम मात्र है। उत्तम-उत्तम सौन्दर्यके चित्र तो नग्न दशामें ही देख पड़ते हैं। पोशाकसे साधारण अंगोंको ढक कर हम मानों कुदरतके दोषोंको दिखला रहे हों। जैसे जैसे हमारे पास ज्यादा पैसे होते जाते है वैसे ही वैसे हम सजावट बढ़ाते जाते है। कोई किसी भाँति और कोई किसी भाँति रूपवान बनना चाहते है और बनठन कर काचमें मुँह देख प्रसन्न होते है कि वाह मै कैसा खूब सूरत हूँ! बहुत दिनोंके ऐसे ही अभ्याससे अगर हमारी दृष्टि खराब न होगई हो तो हम तुरंत देख सकेंगे कि मनुष्यका उत्तम से-उत्तम रूप उसकी नग्नावस्थामें ही है और उसीमें उसका आरोग्य है। जितनी पोशाक पहनोगे उतने ही दर्जे रूपका भंग होगा। कपड़े-लत्तेको बस न समझ कर स्त्री-पुरूष गहने पहनते हैं। कई पुरुष पैरोमें कड़े, कानोंमे मुरकी और हाथमें अँगूठी पहनते है। ये सब गन्दगीके घर हैं और यह समझना सहज नहीं है कि इनमें शोभा क्या है। औरतोंने तो हद करदी है। पैर भी न उठ सके ऐसे भारी कड़े, लंगर, कानोंमें—बालियाँ, कर्णफूल, पत्ते, नाकमें—लौंग, नथ, गलेमें—ठुस्सी, चन्द्रहार और हाथोंमें—पोंची, चूडी, बाजूबंद आदि जितने जेवर हों उतने ही कम! इन्हें पहन कर वे शरीर पर खूब मैल चढ़ाती है। कान और नाकमें तो मैलकी हद ही नहीं रहती। इस मैली दशाको शृंगार समझ कर हम पैसेको उड़ाये देते हैं। चोरोंके भयसे जीवको जोखममें डालते हुए भी नहीं डरते। सच्ची बात तो यह है कि अनेक दुःख पाकर भी हम अभिमानसे उत्पन्न हई

मूर्खताके लिए बे-हद खर्च करते हैं। कानोंमें क्षत होने पर भी स्त्रियोंने अपने पत्ते न निकालने दिये। हाथमें फोड़े हो जायँ, हाथ सड़ जायँ, परन्तु चूड़ी नहीं निकल सकती। उँगुली भले ही पक जाय परन्तु हाथसे अँगूठी निकल जाय तो स्त्री-पुरुषके रूपमें कमी पड़ जाय! ऐसी ऐसी बातें तो बहुतोंने अपनी आँखोंसे देखी होंगी।

पोशाकके सम्बन्धमें बहुत कुछ सुधार करना कठिन है; परन्तु यदि हम चाहे तो जेवर और जुरूरतसे ज्यादा कपड़ोंको विदा कर सकते है। रीति रवाजका अनुसरण करनेके लिए कुछ कपड़ोंको रख कर औरोंको छोड़ सकते है। जो मनुष्य इस भ्रमसे छूट गया है कि पोशाक मनुष्यका भूषण है वह बहुत कुछ सुधार कर अपने आरोग्यकी रक्षा कर सकता है।

अब ऐसी हवा चल पड़ी है कि हमें योरपकी पोशाक पहननी चाहिए। इससे हमारा रोब जमेगा और लोग हमें मान देगें। इन सब बातोंका विचार करनेके लिए यह स्थान नहीं है। यहाँ तो इतना ही कहना आवश्यक है कि योरपकी पोशाक योरपसे ठंडे देशके लिए भले ही योग्य हो परन्तु हिन्दुस्तानके हिन्दू और मुसलमान दोनोंकी पोशाक हिन्दुस्तानके लिए उचित है। हमारे कपड़े ढीले होनेसे हवा आ-जा सकती है। सफेद होनेसे उनमें सूर्यकी किरणें इकट्ठी नहीं होती—बिखर जाती है। काले रगके कपड़ोंमें सदा सूरजकी विशेष गरमी मालूम होगी, क्योंकि उसमेंसे सूर्यकी किरणें बिखर नहीं कसती।

हम माथेको ढके रहते है। बाहर जाते वक्त तो जरूर ही ढकते हैं। पगड़ी तो हमारी पहचान ही होगई है। ऐसा होने पर भी जहाँ मौका हो वहाँ पर सिर खुला रखनेमें फायदा ही है। बाल बढ़ाकर पट्टियाँ पाड़ना जंगलीपन ही जान पड़ता है। बढ़ाये हुए बालोंमें धूल, मैल और लीखें रहती हैं। सिरमें फोड़े हों तो उनका इलाज करना कठिन हो पड़ता

है । पगड़ी पहननेवाला मनुष्य साहब लोगोंकी तरह बाल बढ़ावे तो यह सरासर बेवकूफी है ।

पगके द्वारा भी हम बहुतसी बीमारियोंके पंजेमें आ जाते हैं । बूट वगैरह पहननेवालेके पैर कोमल हो जाते हैं । उनमें पसीना निकलता है और बदबू देता है । जो मनुष्य बासको परख सकता है वह, बूट पहननेवाले मनुष्यके पास बूट और मौजे खोलते समय खड़ा नहीं रह सकता । क्योंकि उस मनुष्यके पैरसे बड़ी बुरी बदबू निकलती है । हमारे यहाँ जूतेको पगरखी कहते हैं । इससे यदि हमें काटोंमें चलना हो, बहुत धूपमें चलना हो, या जाड़ेमें चलना हो तो उसके उपयोग करनेकी आवश्यकता है । वह भी सारे पैरको ढकनेकी कोई जरूरत नहीं है । केवल तलोंके ढकनेकी जरूरत है । इससे सिद्ध हुआ कि जरूरतके समय हमें केवल सैंडल पहनने चाहिए । जिनका सिर दुखता हो, जिनका शरीर निर्बल हो, जिनके पैर दुखते हों और जिन्हें जूते पहननेकी आदत हो उन्हें चाहिए कि वे बिना जूता पहने चलनेके प्रयोगको आजमा देखें । उन्हें तुरंत ही जान पड़ेगा कि पैरोंसे जमीन पर चल कर उनमें पसीना न आने देकर हम कितना लाभ उठा सकते हैं । सैंडल बहुत अच्छी जातिकी जूतियाँ हैं और औरोंकी अपेक्षा सस्ती भी हैं । आफ्रिकामें पाइनटाउनके पास ट्रापिस्ट लोक ऐसी जूतियाँ बनाते है । फिनिक्समें भी सैंडल बन सकते हैं । साधारण वर्गके मनुष्य इतनी हिम्मत नहीं कर सकते कि वे अकेले सैंडलसे निर्वाह कर सकें । ऐसे मनुष्योंको चाहिए कि जब वे पैरोंको खुला रख सकें तब तो रक्खें ही और जो बूटके बिना चलाया जा सके और कुछ पगतलीके लिए आवश्यकता हो तो सैंडलका उपयोग करें ।

८ स्त्री-पुरुषका सम्बन्ध ।

जिन्होंने आरोग्यके प्रकरण ध्यान पूर्वक पढ़े हों उनसे मेरी प्रार्थना है कि इस प्रकरणको विशेष ध्यानके साथ पढ़ें और इस पर खूब विचार करें। और-और प्रकरण तो पुस्तकमें आगे भी आयेंगे और मैं मानता हूँ कि वे उपयोगी होंगे, परन्तु इस विषय पर ऐसा आवश्यक दूसरा एक भी प्रकरण न आयगा। मैं पहले ही सूचित कर गया हूँ कि इन प्रकरणोंमें मैंने एक भी ऐसी बात नहीं लिखी है कि जिसके सम्बन्धमें मुझे स्वयं अनुभव न हुआ हो या मैं दृढ़तापूर्वक उसे न मानता होऊँ।

आरोग्यकी बहुतसी कुंजियाँ हैं और उन सबकी आवश्यकता है, परन्तु मुख्य कुंजी ब्रह्मचर्य है। अच्छी हवा, अच्छी खुराक, अच्छे पानी आदिसे हम आरोग्य सम्पादन करते हैं। परन्तु जिस भाँति हम जितना पैसा कमावें उतना ही यदि खोदें तो कुछ बच नहीं सकता उसी भाँति जितना आरोग्य सम्पादन करें उतना ही यदि नष्ट करदें तो फिर क्या बच रहेगा। अतएव आरोग्य-धनकी रक्षा करनेके लिए क्या स्त्री और क्या पुरुष, दोनोंको ब्रह्मचर्यकी पूर्ण आवश्यकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जिसने अपने वीर्यकी रक्षा की है वही वीर्यवान-बलवान कहा जायगा।

सवाल होता है कि ब्रह्मचर्य क्या है? पुरुष स्त्रीको और स्त्री पुरुषको न भोगे इसीको ब्रह्मचर्य कहते हैं। 'न भोगे' का अर्थ यह है कि एक दूसरेको विषयकी इच्छासे स्पर्श न करे, इतना ही क्यों इस विषयका विचार भी न करें। मेरे खयालसे तो ऐसा स्वप्न भी न देखे। पुरुष स्त्री-को देखकर पागल न हो जाय और स्त्री पुरुषको देखकर। जो गुप्त-शक्ति कुदरतने हमें दी है उसे दबाकर अपने शरीरमें संग्रह कर उसका उपयोग अपने आरोग्य बढ़ानेमें करना चाहिए और वह आरोग्य केवल शरीरका नहीं, मनका, बुद्धिका और स्मरण शक्तिका भी होना चाहिए।

अब जरा उस कौतुकको भी देखें जो हमारे आस-पास बन रहा है। छोटे बड़े सब स्त्री-पुरुष बहुत करके मोहमें पड़े हुए हैं। ऐसे मौकों पर हम पागलसे बन जाते है। हमारी बुद्धि ठिकाने नहीं रहती। हमारी आँखों पर परदे गिर जाते हैं। हम कामान्ध हो जाते है। काममें पड़े हुए स्त्री-पुरुष और बाल-बच्चोंको मैंने बिल्कुल पागलके ऐसे देखे है। मेरा निजी अनुभव इससे और प्रकारका नहीं हैं। जब जब मै ऐसी दशामें आया हूँ तब तब मैं अपना भान भूल गया हूँ। यह बात ही ऐसी है। इस तरह एक रत्तीभर रति (सुख)के लिए हम एक मनसे भी विशेष अपना बल एक पलभरमें खो बैठते हैं। जब हमारा मद उतर जाता है तब हम रंक हो जाते है। दूसरे दिन प्रातःकाल हमारा शरीर भारी रहता है। हमें सच्ची चैन नहीं पड़ती। हमारा शरीर शिथिल हो जाता है। मन ठिकाने नहीं रहता। इस स्थितिको ठीक करनेके लिए हम दूधके काढ़े पीते हैं, गजवेलकी फॉकियॉ लेते है, आकूतियॉ खाते हैं, वैद्योंसे पुष्टि-कारी दवा मॉंगते हैं और खोजते ही रहते है कि कौनसी खुराकसे कामोद्दीपन होगा। इसी तरह समय व्यतीत होता रहता है। जैसे जैसे वर्ष बीतते है वैसे वैसे हमारे शरीर और बुद्धि क्षीण होते जाते हैं और बुढ़ापेमें हमारी बुद्धि रफू-चक्कर हो जाती है।

वास्तवमें ऐसा न होना चाहिए। बुढ़ापेमें बुद्धि मंद होनेकी जगह तेज होनी चाहिए। हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि इस देहसे सम्पादन किया अनुभव हमें और दूसरोंको उपयोगी हो पड़े। और जो ब्रह्मचर्यका पालन करता है उसकी ऐसी स्थिति रहती है। उसे मृत्युसे डर नहीं होता। वह ईश्वरको नहीं भूलता। वह हाय-तोबा नही करता। वह मुसकराता हुआ इस देहको छोड़कर अपने मालिकके पास हिसाब देनेको जाता है। जो इस भॉति मरता है वही पुरुष है और जो वही स्त्री है। और कहना चाहिए कि उसीने आरोग्य रक्षा की है।

हम साधारणतः इस बातका विचार नहीं करते कि इस जगत्में, मौज-शौक, आडंबर, ईर्षा, द्वेष, क्रोध, अधीरता, अभिमान आदि ब्रह्मचर्यका भंग करनेसे होते हैं। अगर हम अपने मनको वशमें न रख सकें, और हम बच्चोंसे भी बढ़ जायँ तो फिर हम जान-अजानमें कौनसा अपराध न करेंगे—किस घोर कर्मको करते हुए रुकेंगे ?

परन्तु ऐसा ब्रह्मचर्य पालनेवाले है कौन ? सब इस तरह ब्रह्मचर्य पालन लग जायँ तो दुनियाँका सत्यानाश हो जाय । इसमें धार्मिक चर्चाका आ जाना सम्भव है, इस लिए उस विभागको छोड़कर केवल सांसारिक दृष्टिसे ही हम इस पर विचार करेंगे। मेरे विचारमें इन दोनों कल्पनाओंका मूल हमारी कायरता और भय है। हम ब्रह्मचर्य पालना नहीं चाहते, इस लिए छुटकारा पानेके बहाने ढूँढ़ते है । ब्रह्मचर्य पालनेवाले दुनियाँमें बहुत पड़े हैं; परन्तु वे खोजनेसे सहज ही मिल जाते हों तो उनकी कीमत भी क्या हो ? हीरा पानेके लिए अनेक मजदूरोंको इस पृथ्वीकी खानोंमें रुके रहना पड़ता है और इतने पर भी पहाड़ जितने कंकरोंमेंसे एक मुट्ठीभर हीरे हाथ आते हैं। ऐसी सूरतमें ब्रह्मचर्य पालनेवाले हीरोंको खोजनेके लिए कितना प्रयत्न करना चाहिए ? इस प्रश्नका उत्तर सबको हिसाब करके अपने आप निकालना चाहिए । ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए पृथ्वीका नाश हो जाय तो उसके साथ हमारा सम्बन्ध ही क्या है ? हम कुछ ईश्वर नहीं है—जिसने पृथ्वीको बनाया है, वह अपने आप उसे सम्हालेगा। दूसरे ब्रह्मचर्य पालते हैं या नहीं, हमें यह प्रश्न ही न करना चाहिए। व्यापार, वकालत आदि करते समय कौन यह विचार करने बैठता है कि सब इन धंदोंमें लग जायँगे तो क्या होगा ? कहनेका अभिप्राय यह है कि इन प्रश्नोंका उत्तर ब्रह्मचर्य पालन करनेवालेको समय पर अपने आप मिल जायगा। वे दिन दहाड़े देख सकेंगे कि सब ब्रह्मचर्य पालें तो क्या हो ।

जंजाली मनुष्य इस विचारको कैसे अमलमें ला सकेंगे? विवाहितोंको क्या करना चाहिए? बाल-बच्चोंवाले क्या करें? जो कामको वशमें न कर सकते हों उन्हें क्या करना चाहिए? इत्यादि प्रश्न उठते हैं। अच्छी-से अच्छी बात क्या है सो हम कह चुके। इस नमूनेको सामने रखनेसे ऐसी ही या इससे कम दर्जेकी नकल की जा सकेगी। बच्चेको जब सिखाते हैं तब उसके सामने उत्तम-से-उत्तम अक्षरका नमूना रखते हैं। वह उसकी अपनी शक्तिके अनुसार अच्छी-बुरी नकल करता है। यही बात ब्रह्मचर्यकी समझिए। अखंड ब्रह्मचर्यका आदर्श अपने साम्हने रख कर हमें उसकी नकल करना चाहिए। ब्याह दिये गये तो क्या हुआ? कुदरती कायदा तो यह है कि स्त्री-पुरुषको जब प्रजा उत्पन्न करनेकी इच्छा हो तभी ब्रह्मचर्यका भंग करे। इस नियमका विचार कर जो दम्पती दो-चार वर्षमें ब्रह्मचर्यका भंग करेंगे वे बिल्कुल पागल न बन जायँगे। उनके पास वीर्य-धन भी ठीक इकट्ठा रहेगा। पर भाग्यसे ही ऐसे दम्पती हमारे देखनेमें आवेंगे कि जो प्रजाके लिए ही काम-भोग करते हों। बाकी हजारों मनुष्य तो काम-भोगकी लालसामें ही लगे रहते हैं और काम-सेवन करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उनकी इच्छाके विरुद्ध प्रजा होती है। इस विषय-सेवनमें हम ऐसे अन्धे हो जाते हैं कि अपने सामनेवालेका विचार ही नहीं करते। इस बातमें स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषका अपराध भारी है। वह अपने पागलपनमें नहीं सोचता कि स्त्री निर्बल है और सन्तानका पालन-पोषण करनेकी उसमें शक्ति नहीं है। पश्चिमके लोग तो इस विषयमें मर्यादाका भी उल्लंघन कर गये। वे भोग भोगते और सन्तानके भारसे दूर रहनेके लिए अनेक उपचार करते हैं। वहाँ इस विषय पर ग्रन्थ लिखे गये हैं। भोग भोगते रहने पर भी सन्तान न होने पावे ऐसा उपाय बतलानेवालोंकी दूकानें खुल गई हैं? अभी हम ऐसे पापसे मुक्त हैं; परन्तु हम अपनी स्त्रियों पर बोझा लादते हुए घड़ी

भर भी विचार नहीं करते । हम इस बातकी भी परवा नहीं करते कि हमारी प्रजा, निर्बल, वीर्य-हीन, पागल और निर्बुद्धि होती है । जब जब प्रजा होती है तब तब हम ईश्वरका उपकार मानते हैं; परन्तु यह अपनी कंगालीको ढकनेका एक मार्ग है । निर्बल, लूली-लँगड़ी, विषयी, और निःसत्व सन्तानोंके होनेमें हमें ईश्वरका कोप क्यों न मानना चाहिए ? कम उम्रमें सन्ततिके होनेमें हमें कौनसी सुख माननेकी बात है ? उस समय हमें क्या उत्सव मनाना चाहिए ? बारह बारह वर्षकी छोकरियाँ माता हो जावें इसे प्रकृतिका महाकोप क्यों न गिना जाय ? हम इस बातको जानते हैं कि तुरतके बोये हुए वृक्ष पर फल आ जायँ तो वह वृक्ष निर्बल होता है । इससे हम ऐसे उपाय करते हैं कि फल न लगने पावें । ऐसा होने पर भी कम उम्रके बाल-बच्चोंके सन्तान हो तो हम आनन्द-बधाइयाँ गाते हैं । पर यह भयंकर भूल है । हिन्दुस्तानमें या संसारमें निःसत्व मनुष्योंके समुदाय चींटियोंकी भाँति उभरा जायँ, इससे हिन्दुस्तानका या दुनियाका क्या उद्धार हो सकता है ? हमसे तो तब पशु ही अच्छे हैं कि हम उनका तभी मिलाप कराते हैं जब कि बच्चा पैदा कराना चाहते है । संयोग हुए बाद गर्भसे लेकर बच्चा पैदा होकर जब तक दूध पीना न छोड़दे तब तकका समय अत्यन्त पवित्र गिनना चाहिए; और इस समयमें पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए। परन्तु हम घड़ी भर भी इस विचारको अपने पास नहीं आने देते और अपना काम किये ही जाते हैं ! ऐसे असाध्य रोगसे हमारे मन रोगी हो रहे हैं । यह रोग हमें मौतसे मिलाता है और जबतक मौत नही आती तबतक हमारा मन पागलोंकी भाँति भ्रमा करता है । विवाहित स्त्री-पुरुषोंका मुख्य कर्तव्य है कि वे विवाहका खोटा अर्थ न कर ठीक अर्थ करें और जब सन्तति न हो तब वारिसकी इच्छासे ही संयोग करें ।

हमारी घृणा-योग्य स्थितिमें ऐसा करना बहुत कठिन है। हमारी खुराक, हमारा रहन-सहन, हमारी बात-चीत, हमारे आस-पासके दृश्य ये सब हमारी विषय-वासनाको जागृत करनेवाले हैं और हमें अफीमकी तरह विषयका नशा चढ़ रहा है। हमारी जब यह स्थिति है तब विचार कर हम पीछे कैसे हट सकते है ? परन्तु जो ऐसी शंका करते हैं उनके लिए ये प्रकरण नहीं लिखे गये है। ये प्रकरण तो उनके लिए हैं जो क्या करना चाहिए, इसका विचार कर प्रयत्न करनेको तैयार हों। जो अपनी स्थितिमें सन्तोष मानते हैं उन्हें इन विचारोंको पढ़नेमें झुंझलाहट होगी; परन्तु जो अपनी हीन दशाको समझ गये हैं और उससे उकता गये हैं उन्हें मदद देना इस लेखका हेतु है।

ऊपर लिखे हुए विषयसे हम समझ सकते हैं कि जिनका विवाह नहीं हुआ हो उन्हें ऐसे कठिन कालमें विवाह ही न करना चाहिए। यदि ब्याहके बिना काम ही न चले तो देरसे विवाह करना चाहिए। जवान पुरुषोंको पचीस-तीस वर्षकी अवस्थातक विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा करनी चाहिए। ऐसा करनेसे आरोग्यके सिवाय और भी जो अन्यान्य लाभ होंगे उनका यहाँ पर हम वर्णन नहीं कर सकते। उन लाभोंको सब कोई अपने आप प्राप्त कर सकते हैं।

जो माता-पिता इन लेखोंको पढ़ें उन्हें इतना कहना योग्य समझता हूँ कि वे अपने बच्चोंकी बचपनमें ही ब्याह-शादी कर अपने अन्ध स्वार्थके लिए उनके गले पर छुरी न फेरें। वे अपने बच्चोंका भी स्वार्थ देखें। जाति-बिरादरीमें बड़े कहलाने और मूर्खोंमें नाम पानेके लिए उनकी हत्या न करें। वे अपने बच्चोंके शरीरकी रक्षा करें। उन्हें शिक्षा दें, अभ्यास करावें और योग्य बनावें, न कि उनका बचपनमें ब्याह कर उन पर घर-

संसारका बोझा डाल दें । इस प्रकारके काम करनेमें बच्चोंका बड़ा भारी अहित है ।

अखीरमें जो स्त्री या पुरुष अपने साथीके मर जानेके कारण वैधव्य या विधुरपनेको प्राप्त होगये हैं उन्हें सर्वथा ब्रह्मचर्य पालना चाहिए । यही आरोग्यका नियम है । कितने ही डाक्टरोंका मत है कि जवान स्त्री-पुरुषको वीर्यपात करनेका मौका मिलना चाहिए और दूसरे डाक्टरोंका कहना है कि किसी भी तरह वीर्यपात करनेकी जरूरत नहीं है । इस तरह डाक्टरोंमें भी परस्पर मत भेद है । हमें यह समझ कर, कि कुछ डाक्टर लोग विषय-सेवनको अच्छा भी समझते है, विषय-सेवनकी ओर न झुक जाना चाहिए । मै अपने निजके और दूसरोंके अनुभवसे बे-धड़क कह सकता हूँ कि आरोग्य-रक्षाके लिए विषय-सेवनकी कुछ आवश्यकता नहीं है । इतना ही नहीं, विषय-सेवन करनेसे--वीर्यपात होनेसे--उलटा आरोग्यको नुकसान पहुँचता है । बहुत समयसे बँधी हुई तन-मनकी दृढ़ताको एक वारके वीर्यपातसे भी ऐसी हानि पहुँचती है कि उसे पूरी करनेक लिए बहुत समय चाहिए और इसके बाद भी असली स्थिति तो आ ही नहीं सकती । फूटे हुए प्यालेको जोड़ कर काम लिया जा सकता है, परन्तु वह समझा जायगा फूटा ही ।

वीर्य-रक्षाके लिए स्वच्छ हवा, स्वच्छ पानी, स्वच्छ खुराक और स्वच्छ विचारोंकी पूरी आवश्यकता है । इस भाँति नीति और आरोग्यका बहुत ही निकट सम्बन्ध है । पूर्ण नीतिमान् ही पूरा आरोग्य सम्पादन कर सकता है ? बीती हुई बातोंको भूलकर जो इस विषय पर विचार करेंगे और उसे उपयोगमें लावेंगे उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव हो जायगा । थोड़े समयतक भी जिन्होंने ब्रह्मचर्यका पालन किया है वे देख सकेंगे कि हमारे शारीरिक और मानसिक बलमें कितनी उन्नति हुई है । एकवार यह पारस-मणि हाथमें आगया कि लोग इसकी जी-जानके साथ सम्हाल रक्खेंगे । यदि जरा भी

वे चूकेंगे तो तुरंत कहेंगे कि हमने बड़ी भूल कर डाली। मैंने तो ब्रह्मचर्यके अगणित लाभ समझे बाद भी भूलें की हैं और उनके कड़वे फल भी भोगे हैं। दुःख है कि कहाँ तो भूल किये पहलेकी वह भव्य दशा और कहाँ भूलके बादकी मेरी यह कंगाल स्थिति। मेरे सामने अपनी इस दशाका चित्रसा खिंच जाया करता है। परन्तु मैं अपनी भूलोंसे इस मणिकी कद्र करना सीखा हूँ। अब भी नहीं जानता कि अखंड रीतिसे इसका पालन कर सकूँगा या नहीं; परन्तु मुझे आशा है, परमात्माकी सहायतासे मैं इसे पाल सकूँगा। ब्रह्मचर्यसे मेरे शरीर और मनको जो लाभ हुए हैं उन्हें मैं देख रहा हूँ। मैं बालकपनमें ही ब्याह दिया गया था, और बालकपनमें ही कामान्ध होकर मैं बाल-बच्चोंका पिता भी बन गया था। मैंने बहुत वर्षोंके बाद जग कर देखा तो मुझे जान पड़ा कि मैं घोर अँधेरेमें पड़ा हुआ हूँ। मेरी भूलसे—मेरे अनुभवसे कोई भी सचेत होकर बचेगा तो मैं समझूँगा कि इस प्रकरणको लिखकर मैं कृतार्थ हुआ। लोग समझते हैं कि मुझमें बहुत ही उत्साह है और मैं भी इस बातको मानता हूँ। मेरा मन निर्बल नहीं माना जाता और इसी कारण कितने ही तो मुझे हठी कहते हैं। मेरे तन और मनमें रोग हैं; परन्तु सहवासमें जिन लोगोंको मैंने देखा है उनकी अपेक्षा मेरी तन्दुरुस्ती अच्छी है। लगभग बीस वर्षतक विषयोंमें फँसे रह कर जगनेके बाद मैं जिस दशाको प्राप्त कर सका हूँ, यदि इन बीस वर्षोंको भी मैं बचा सकता तो कितना अच्छा होता। इस विषयमें मेरा स्वतःका तो मानना है कि आज मेरे उत्साहका पार हीन रहता और लोकसेवा या अपने स्वार्थमें जितना उत्साह मैं बतला सकता उसका मुकाबिला करनेवालेकी परख हो जाती। मेरे साधारण उदाहरणसे बस इतना ही सार खींचा जा सकता है। और जिनने अखंड ब्रह्मचर्यका पालन किया है उनके शारीरिक, मानसिक और नैतिक बलका तो वे ही लोग अन्दाज कर सकते हैं जिन्होंने उन्हें देखा है। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

इस प्रकरणको पढ़नेवालोंने समझ लिया होगा कि जब विवाहित स्त्री-पुरुषोंको भी ब्रह्मचर्य पालनेकी शिक्षा दी गई है और रँडुवोंको या विधवा-ओंको भी ब्रह्मचर्य पालन करना बतलाया है तब विवाहित या अविवाहित स्त्री-पुरुषोंके लिए अन्यत्र विषय सेवनकी तो बात ही नहीं कही जा सकती । परस्त्री या वेश्या पर कुदृष्टि डालनेसे क्या परिणाम होता है इसका विचार आरोग्यके प्रकरणमें नही किया जा सकता । यह धर्म और गंभीर नीति-का विषय है । यहाँ तो इतना ही कह सकते हैं कि परस्त्री और वेश्या गमन करनेवाले हजारों पुरुष गरमी आदि नाम न लेने योग्य नीच रोगोंसे सड़ते हुए देखनेमें आते है । कुदरतकी कृपासे ऐसे स्त्री-पुरुषोंका शरीर फूट निकलता है और वे चार पाई पर पड़े रहते है । अपनी बीमारियोंको दूर करनेके लिए उन्हें डाक्टरोंके यहाँ चक्कर लगाने पड़ते है । पर तब भी वे लाभ नहीं उठा पाते । जहाँ परस्त्री-गमन न हो वहाँ पर $\frac{५०}{१००}$ वैद्य-डाक्टर निकम्मे रहते है । इन बीमारियोंने मनुष्य-जातिको ऐसा घेर रक्खा है कि विचारशील डाक्टर कहने लगे है कि दवा होने पर भी जबतक परस्त्री-गमनका स्रोत जारी रहेगा तबतक प्रजाका शीघ्र नाश होनेके सिवाय कोई वश नहीं । इन बीमारियोंकी औषधि ऐसी जहरीली है कि जिसका कोई ठिकाना नही । यद्यपि इन दवाओंसे ऐसे रोगोंमें लाभ पहुँचता देखा जाता है, परन्तु इसके साथ ही दूसरे अनेक रोग शरीरमें घर कर बैठते हैं और फिर वे वंशमें उतरते हैं ।

अब विवाहित मनुष्योंको ब्रह्मचर्यका उपाय बतला कर इस प्रकरण-को पूरा करते हैं । विवाहित मनुष्य केवल हवा, पानी और खुराकके नियमोंका पालन करके ही ब्रह्मचर्यकी रक्षा नहीं कर सकता । उसे अपनी स्त्रीके साथके एकान्त-वासको भी छोड़ना चाहिए । विचार करनेसे जान

पड़ेगा कि विषय भोगनेके सिवाय स्त्रीके साथ एकान्त सम्बन्धकी जरूरत नहीं है। रातमें स्त्री-पुरुषोंको अलग कमरेमें सोना चाहिए। दिनमें दोनों-को निरंतर अच्छे कामोंमें लगे रहना चाहिए, अपने सुविचारोंको उत्तेजित करनेवाली पुस्तकें पढ़नी चाहिए, श्रेष्ठ पुरुषोंके जीवन-चरित्रों पर विचार करना चाहिए, और निरंतर यही चिन्तवन करते रहना चाहिए कि भोग तो सदा ही रोगके घर है। जब जब विषयकी इच्छा हो तब तब उन्हें ठंडे पानीसे नहा लेना चाहिए। ऐसा करनेसे शरीरमें जो महा अग्नि है उसका सुन्दर रूपान्तर होकर वह स्त्री और पुरुष दोनोंका उपकारक हो जायगी और सच्चे सुखको बढ़ावेगी। ऐसा करना कठिन है, परन्तु कठि-नाइयों पर विजयका नक्कारा बजानेके लिए तो हम पैदा ही हुए हैं; जिसे आरोग्य पाना हो उसे कठिनाइयों पर विजय सम्पादन करना ही पड़ेगा।

आरोग्य-दिग्दर्शन ।

(उत्तरार्द्ध)

१ हवा ।

इस बातका विचार किया जा चुका कि आरोग्य कैसे सुरक्षित रक्खा जा सकता है, उसका आधार किस पर है और उसे संग्रह करनेके लिए क्या करना आवश्यक है। यदि सब मनुष्य आरोग्य-रक्षाके सारे नियमोंका सदा पालन करें और आरोग्यको कायम रखनेके लिए अखंड ब्रह्मचर्यका पालन करें तो अब जो प्रकरण लिखे जायँगे उनकी आवश्यकता ही न पड़े। क्योंकि ऐसे मनुष्योंको शारीरिक या मानसिक रोगोंका होना ही सम्भव नहीं है। परन्तु ऐसे मनुष्य शायद ही मिल सकें—ऐसे भाग्यवान् विरले ही होंगे जिन्हें कभी कोई बीमारी न हुई हो। साधारण मनुष्य तो सदा बीमार ही रहते हैं। ऐसे मनुष्य पूर्वार्द्धमें बतलाये हुए नियमोंको जितना पालन करेंगे उतना ही वे आरोग्य-लाभ करेंगे। ऐसे मनुष्योंको यदि कभी कोई व्याधि हो जाय और उन्हें कुछ उपचारोंका अनुभव हो तो वे घबरा कर वैद्य-हकीमोंके यहाँ दौड़ते न फिरें; इसी हेतुसे ये उत्तरार्द्धके प्रकरण लिखे जाते है। हम लिख चुके हैं कि आरोग्यके लिए हवा सबसे पहली आवश्यक वस्तु है। इसी तरह हवाको रोग नष्ट करनेके लिए भी कीमती चीज समझनी चाहिए। किसी मनुष्यके जोड़ रह गये हों तो उसे गरम हवाकी भाफके देनेसे पसीना छूटेगा और उसके जोड़ ढीले पड़ जायँगे। इस तरह जो भाफ दी जाती है उसे 'टरकिश-बाथ' (स्नान) कहते हैं।

जिस मनुष्यका शरीर बुखारसे आगके सदृश जल रहा हो उसे बिल्कुल नंगाकर खुली हवामें सुलानेसे उसकी गरमीका माप एकदम उत्तर कर, उसकी बे-चैनी मिट जायगी और शरीर ठंठा हो जायगा। जब शरीर ठंढा हो जाय उस समय उसे ओढ़ा देना चाहिए। उससे पसीना आकर उसका बुखार उतर जायगा। हम लोगोंमें ऐसी मानता चली आ रही है कि बीमार चाहे गरमीसे घबरा रहा हो तब भी सब खिड़की-दरवाजे बन्द कर देने चाहिए और बीमारके हाथ-पैर-सिर-कान आदि सब अंग ढककर उसे खूब ओढ़ा देना चाहिए; परन्तु यह मानता बिल्कुल वहम है। इससे बीमार घबरा कर निर्बल हो जाता है। इस तरह ढकनेसे कितनी ही वार पसीना आने पर भी थर्मामिटरका पारा चढ़ा हुआ नही देख पड़ता और बीमार कमजोर अवश्य हो जाता है। गरमीके बुखारमें ऊपर बताया हुआ हवाका प्रयोग करनेमें किसी मनुष्यको नही डरना चाहिए। उसे इस प्रयोगका लाभ तुरंत जान पड़ेगा। इससे हानि तो होती ही नहीं। केवल इस बातकी सम्हाल रखनी चाहिए कि बीमार नंगा रखनेसे स्वयं धूजने न लगे। बीमारको ठंड मालूम हो तो समझना चाहिए कि उसे सख्त घबराहट नहीं है। अगर बीमार नग्न-दशामें बाहर न रह सकता हो तो उसे बाहर खुली हवामें ओढ़ाकर सुलानेमें कभी नुकसान नहीं होगा।

बहुत दिनोंके बुखार या दर्दके लिए हवा परिवर्तन करना अकसीर इलाज है। हवा बदलनेका रिवाज हवाके उपचारका ही अंग है। मकानको हम कई वार बदलते ही है। कई ऐसा मानते है कि जिस घरसे बीमारी नहीं जाती उसमें भूत-प्रेत निवास करते हैं, परन्तु यह निरा वहम ही मालूम होता है। हाँ यह कह जा सकता है कि वह हवाकी खराबी ही भूत-प्रेत है; अतएव घरके बदलनेसे हवा भी बदल जाती है। यही बड़ा भारी फायदा होता है। हवाका हमारे शरीरके साथ कैसा गाढ़ सम्बन्ध है कि कुछ भी उसमें फेर-फार हो तो उसका अच्छा-बुरा फल हमें मिले

बिना नहीं रह सकता। पैसेवाले आदमी दूर देशमें जा सकते हैं। गरीब मनुष्य अपने एक गाँवसे दूसरे गाँवमें या एक घरसे दूसरे घरमें जावें तो भी फायदा उठा सकते है। एक कोठेसे दूसरे कोठेमें ले जानेसे भी बीमारको लाभ पहुँचता है। इस परिवर्तनके समय इस बातका विचार कर लेना आवश्यक है कि जहाँ वे जावें वहाँकी हवा विशेष अच्छी होनी चाहिए। नमीकी हवामें पैदा हुई बीमारी विशेष नमीवाली हवाके स्थानों पर जानेसे दूर न होगी। कितनी ही वार हवा बदलनेसे लाभ नही होता। इसका कारण यही है कि समझ कर हवा बदली नहीं जाती और कितनी ही वार ऐसा होता है कि हवा बदलनेके लिए और-और जो सावधानियाँ रखनी चाहिए वे नहीं रक्खी जाती।

इस प्रकरणके पढ़नेवालोंसे, पूर्वार्द्धमें लिखे गये हवाके प्रकरणके साथ इस प्रकरणकी तुलना करनेकी मै सिफारिश करता हूँ। उस प्रकरणमें हवाके सम्बन्धमें सामान्य विचार किया है और बतलाया है कि हवाका आरोग्यके साथ क्या सम्बन्ध है। इस प्रकरणमें हवाका इलाजके तौर पर विचार किया है। उस प्रकरणको इस प्रकरणके साथ पढ़ जानेसे यह प्रकरण विशेष अच्छी तरह समझमें आ जायगा।

1

२ जल चिकित्सा।

हवा अपना काम अदृश्य रीतिसे करती रहती है, इससे हम हवाके उपचारोंकी खूबीको अच्छी तरह नहीं देख सकते। परन्तु पानीका काम और पानीके असरको हम देख सकते हैं, इससे उसकी खूबियाँ तुरंत समझमें आ सकती है।

भाफके जरियेसे होनेवाले पानीके उपचारको थोड़ा बहुत सब कोई जानते है। बुखारमें हम बीमारकी भाफसे चिकित्सा करते है। बहुत वार मस्तकके भारी दर्दको भाफसे मिटा देते हैं। सन्धि-वातसे सन्धियाँ जुड़ गई हों तो भाफ देकर ठंडे पानीमें स्नान करानेसे शीघ्र ही लाभ पहुँचता है। शरीरमें फोड़े-फुन्सी होगये हों तो केवल मल्हम-पट्टीसे काम नही चल सकता—भाफ देनेसे वे शीघ्र ही मुरझा जायँगे। बहुत थका हुआ आदमी अगर भाफ ले या गरम पानीसे स्नान कर तुरंत ठंडे पानीसे स्नान करे तो उसका शरीर बिल्कुल हल्का हो जायगा और उसकी थकावट उतर जायगी। जिसे नींद न आती हो वह भाफ लेकर ठंडे पानीसे स्नान कर खुली हवामें सो जाय तो बहुत करके उसे शीघ्र नींद आ जायागी।

जहाँ भाफका उपयोग किया जाता है वहाँ पर गरम पानीका उपयोग भी हो सकता है। अतएव गरम जल और भाफमें भेद न समझना चाहिए। पेटमें सख्त दर्द हो तो एक बोतलमें खौलता हुआ गरम जल भरकर और पेट पर एक मोटा कपड़ा रखकर उसका सैंक करनेसे तुरंत आराम मिलेगा। ऐसी दशामें कितनी ही वार उलटी करनेकी जरूरत होती है। खूब गरम पानी पीनेसे उलटी हो सकती है। जिसे कब्ज रहती हो उसे सोते समय या सुबह उठ कर दतौन किये बाद गरम पानी पीनेसे साफ दस्त होना सम्भव है। सर गार्ड़न फिंग एक कैंपके प्रधान थे। उनकी तन्दुरुस्ती अच्छी

रहती थी। उनसे किसीने पूछा कि आपकी तन्दुरुस्ती अच्छी होनेके कारण क्या हैं ? इसका जवाब उन्होंने यह दिया कि मैं सोते समय और प्रातःकाल उठते समय एक एक ग्लास गरम पानी पिया करता हूँ। उससे मेरी तन्दुरुस्ती अच्छी रहती है। कितने ही मनुष्योंको चाय पीनेके बाद दस्त उतरता है। पर वे बे-वकूफीसे समझते हैं, कि चायसे दस्त होता है। और वास्तवमें देखा जाय तो चाय नुकसान ही करती है। दस्त साफ होनेका कारण तो उसमेका गरम जल है। भाफ लेनेके लिए खास तरहके चौकटे आते है; परन्तु साधारणतया उनके मोल लेनेकी आवश्यकता नहीं है। निवार या बेंतकी बैठककी कुर्सीके नीचे स्पिरीट या मिट्टीके तैलका चूल्हा रखना चाहिए अथवा जली हुई लकड़ी या कोलेकी अँगीठी रखनी चाहिए। उस पर एक छोटी भगोनीमें जल भरकर उसे ढक देनी चाहिए। कुर्सी पर एक चद्दर या कम्बल रखकर उसे आगेकी ओर इस तरह लटका देना चाहिए कि बीमारको अँगीठी या भाफकी आँच न लगे। फिर बीमारको कुर्सी पर बिठाकर उसके चारों ओर चद्दर या कंबल लपेट देना चाहिए। इसके बाद अँगीठी परसे ढक-नको हटा देना चाहिए। ऐसा करनेसे बीमारको भाफ लगना शुरू होगा। हम लोगोंमें ऐसी रीति है कि बीमारका मस्तक ढक देते हैं; परन्तु इसकी कोई जरूरत नहीं है। शरीरमें जो गरमी आती है वह मस्तक तक चढ़ती है और मुँह पर पसीना आ जाता है। यदि बीमारमें उठने-बैठनेकी ताकत न हो तो निवारके कोच पर या लोहेके पलँग पर उसे सुला कर भाफ दी जा सकती है। उस समय इतनी सावधानी रखनी चाहिए कि गरमी और भाफ बाहर न निकलने पावे और बीमारको आँच न लगे तथा कम्बल वगैरह जल न उठें। यदि बीमार निर्बल प्रकृतिका हो तो भाफ देनेमें बहुत आगा-पीछा करनेकी जरूरत है; क्योंकि भाफ देनेमें जैसे लाभ है वैसे ही हानि भी है। भाफ लिये बाद मनुष्य सदा निर्बल हो जाता

है । यह निर्बलता बहुत दिनों तक नहीं रहती; परन्तु सदा भाफ लेनेकी आदत हो जानेसे मनुष्य निःसत्व हो जाता है। इससे भाफका प्रयोग बड़ी सावधानीके साथ करना चाहिए । भाफ शरीरके जुदे जुदे भागको भी दी जा सकती है । यदि मस्तक दुखता हो तो सारे शरीरको भाफ देनेकी कोई जरूरत नहीं है । एक छोटे मुँहकी मटकीमें जल उकाल कर उस पर मस्तक रखना चाहिए और फिर मस्तकको कपड़ेसे ढक कर नाकसे भाफ लेनी चाहिए। नाक बन्द हो रहा हो तो वह इस तरह भाफ लेनेसे खुल जायगा । जिस हिस्सेमें सूजन चढ़ रही हो तो उसे दूर करनेके लिए उतने ही हिस्सेको भाफ देनी चाहिए ।

साधारण तौर पर गरम पानी और भाफके, फायदोंको लोग समझते है; परन्तु ठंढे पानीके फायदोंको समझनेवाले बहुत कम देखनेमें आते है। इनके समझनेवाले भले ही कम मनुष्य क्यों न हो; परन्तु यह कहा जा सकता है कि ठंढे पानीमें जो असर है वह गरम पानीमें नही है । कई अंशोंमें ठंडा पानी शक्ति देनेका गुण रखता है । निर्बलसे निर्बल मनुष्य पर हम ठंडे पानीके उपचार कर सकते है । लू, शीतला आदि चर्म-व्याधियोंके लिए ठंडे पानीसे भिगोई हुई चद्दर लपेटनेका इलाज बहुत लाभकारी है । इसका अजीब असर होता है और सब कोई बिना किसी प्रकारकी जोखमके इसे आजमा सकते है । यदि चक्कर आते हों, सन्निपात हुआ हो, तो ऐसे समय बरफके पानीमें भिगोया हुआ कपड़ा सिर पर रखनेसे बीमारको शान्ति मिलती है । जिसे दस्त न होता हो, तो उसके पेट पर बरफके पानीमें भिगोया हुआ पट्टा रखनेसे दस्त होना सम्भव है । जिसे वीर्यपात हो जाता हो उसे पेडुओं पर ठंडे पानीके पट्टे बाँधकर सोना चाहिए; इससे बहुत लाभ होना सम्भव है । कहींसे भी खून गिरता हो वहाँ पर बरफके पानीकी पट्टी बाँधनेसे खून गिरना बन्ध हो जाता है । नाकसे खून गिरने पर सिर पर खुब ठंडा पानी डालनेसे लाभ होगा । जिसके नाकमें व्याधि हो,

जिसे जुकाम हो रहा हो, जिसके सिरमें दर्द हो, वे एक-दो वार नाकसे पानी चढ़ावें तो उन्हें बहुत ही लाभ होगा। नाकके एक नथुनेसे पानी चढ़ाकर दूसरे बन्द नथुनेसे निकाला जा सकता है या दोनों नथुनोंसे पानी चढ़ाकर गलेके द्वारा निकाला जा सकता है। नाक साफ हो तो नाकसे चढ़ाया हुआ पानी पेटमें चला जाय तो भी कोई डरकी बात नहीं है। नाकमें पानी चढ़ाकर उसे साफ रखनेकी आदत बहुत अच्छी है। जिसे पानी चढ़ानेकी रीति न आती हो वे पिचकारी द्वारा नाकमें पानी चढ़ा सकते हैं। परन्तु दो-चार वार प्रयत्न करनेसे यह रीति सहजमें आ सकती है। प्रत्येक मनुष्यको यह बात अवश्य जान रखनी चाहिए कि ऐसे सहज उपायसे बहुत वार मस्तका दर्द बन्द हो जाता है। नाकमें बदबू हो तब भी यह उपाय काम देता है। कई लोगोंके नाकमें छिलकेसे जमते रहते हैं उनके लिए नाकसे पानी चढ़ाना रामबाण दवा है।

कितने ही मनुष्य गुदासे पानी चढ़ाते हुए घबराते हैं। कितने ही कहते हैं कि इससे शरीर कमजोर हो जाता है; परन्तु यह भ्रम है। तुरंत दस्त होनेके लिए गुदा द्वारा पिचकारी लेनेसे बढ़कर कोई इलाज नहीं है। बहुतसी बीमारियोंमें जब दूसरे इलाज काम नहीं करते तब यह इलाज काम करता है। इस इलाजसे मल बिल्कुल साफ हो जाता है और नया जहर जमने नहीं पाता। जिसे बादी हो, बदहज्मी हो, या कोठेकी खराबीसे उत्पन्न हुई अन्य कोई दूसरी बीमारी हो तो उसे दो रतल पानी चढ़ाना चाहिए। इस उपायसे उसे बहुत शीघ्र लाभ होगा। इस विषय पर एक मनुष्यने पुस्तक लिखी है। उसने लिखा है कि वह बहुतसे इलाज करते रहने पर भी बदहज्मीसे छुटकारा ही नहीं पाया था; उसका शरीर शिथिल होकर पीला पड़ गया था; परन्तु पिचकारी लेना शुरू किये बाद थोड़े ही दिनोंमें उसकी भूख खुलकर उसकी प्रकृति ठीक होगई। पिचकारीसे पीलियाके सदृश बीमारी तक दूर की जा सकती है। ज्यादा वार

पिचकारी लेनी पड़े तो ठंडे पानीकी लेनी चाहिए; क्योंकि गरम पानीकी ज्यादा वार पिचकारी लेनेसे निर्बलता होना सम्भव है। परन्तु यह स्मरण रहे कि दोष पिचकारीका नहीं है।

बहुतसे प्रयोगोंको आजमा कर डाक्टर लुईकूनेने निश्चित किया है कि हर बीमारीके लिए पानीके अमुक तरहके उपचार उत्तमसे-उत्तम इलाज हैं। उसकी इस विषयकी पुस्तकोंके बहुतसी भाषाओंमें अनुवाद हो चुके हैं। हिंदुस्तानमें भी उसके अनुवाद हुए हैं। उसका कहना है कि सारी बीमारियोंका मूल कोठा है। कोठेमें जब बुखार होता है तब बाहरके भागमें फोड़ेफुंसी, बादी, या दूसरी बीमारियाँ निकल पड़ती है। अथवा बुखार बाहर निकल कर सारे शरीरको गरम कर देता है। जल-चिकित्साके सम्बन्धमें डा० लुईकूनेसे भी पहले हुए एक लेखककी लिखी हुई 'जलचिकित्सा' नामकी एक बहुत पुरानी पुस्तक है। परन्तु लुईकूनेसे पहले किसीने भी बीमारियोंकी एकता पर इतना जोर नहीं दिया; और न यह बतलाया कि सारी बीमारियोंकी मूल उत्पत्ति कोठेसे है। हमें इस बातके मान लेनेकी जरूरत नहीं है कि लुईकूनेका मत सर्वांशमें सही ही है; परन्तु इतना तो निश्चित है कि उसके विचार और उपचार कई बीमारियोंके लिए ठीक लागू पड़ते है। और इस बातका हजारों मनुष्य अनुभव कर चुके हैं। डरबनके स्वर्गीय मजिस्ट्रेट मि० ट्रीनन एकवार धनुर्वात-रोगसे अपंग होगये थे। उन्होंने अनेक डाक्टरोंके इलाज किये; परन्तु कुछ लाभ न हुआ। उन्हें किसीने लुईकूनेके पास जानेके लिए कहा। वे वहाँ गये और अच्छे हो गये। इसके बाद वे बहुत वर्षोंतक डरबनमें रहे। वे हमेशा लोगोंको लुईकूनेके उपचारोंको आजमानेकी सलाह दिया करते थे। लुईकूनेके उपचार करनेकी एक संस्था नातालमें स्वीट-वाटर्स नामके स्टेशन पर है। यह जलचिकित्साकी लोक-प्रियताका एक ही उदाहरण है; परन्तु ऐसे बहुतसे उदाहरण देखनेमें आते हैं।

डा० लुईकूनेने लिखा है, कि कोठेमें ठंडाई पहुँचानेसे उसकी गरमी कम होती है। इसी लिए उसने बतलाया है कि कोठे और उसके आस-पासके भागको जिस भाँति ठंडाई पहुँच सके खूब ठंडे पानीसे स्नान करना चाहिए। ऐसे स्नानकी सुगमताके लिए उसने टीनके खास 'बाथ' बनाये हैं। परन्तु हम उस बाथके बिना काम चला सकते हैं। स्त्री-पुरुषोंके कदके मुवाफिक ३६ इंचके या छोटे-बड़े पतरेके टब आते हैं। वे लुईकूनेके बाथके बदलेमें पर्याप्त हैं। ऐसे टबको ¾ पानीसे भर कर उसमें बीमारको इस तरह बैठाना चाहिए कि उसके पैर और धड़ पानीके बाहर रहें और नाभिसे जाँघों तकका हिस्सा पानीमें डूबा रहे। बीमारको पानीमें बिल्कुल नंगा बैठाना चाहिए। यदि उसे ठंड लगे तो उसके पैर और धड़ कम्बलसे ढक दिये जायँ। बीमारको उस समय कमीज वगैरह भी पहना सकते हैं, परन्तु वह पानीके बाहर रक्खी जानी चाहिए। बाथ ऐसी कोटरीमें लिया जाना चाहिए जहाँ हवा, प्रकाश और धूप आती हो। बीमार टबमें बैठ कर पानीके भीतर पेड़ू पर धीरे धीरे खरदरे रूमालसे स्वयं मले या किसीसे मलवावे। इस तरह यह बाथ ५ से ३० मिनिट तक या ज्यादा देरतक लिया जा सकता है। कई बार इस बाथसे तुरंत असर होता है। बीमारको बादी हो तो तुरंत वायु सर-ने लगता है, या, डकारें आने लगती है। यदि बुखार हो तो पाँच मिनिटमें ही थर्मामेटरका पारा एक-दो डिगरी नीचे उत्तर जायगा। इससे दस्त होता है। थके हुए मनुष्यकी थकावट दूर हो जाती है। जिसे बिल्कुल नींद न आती हो उसका दिमाग शान्त होकर उसे नींद आने लगे-गी और जिसे बहुत नींद आती होगी उसकी नींद दूर होकर उसमें चैतन्य आ जायगा। इस बाथसे इस तरह ऊपर-ऊपरसे विरुद्ध जान पड़नेवाले परिणाम निकलते हैं। इसका कारण ऊपर बतलाया जा चुका है। बहुत आलस्य और बहुत जागृति ये दोनों एक ही कारणके पृथक्-पृथक् परि-

णाम है—इनमें देखने मात्रका विरोध है । आतिसार और बद्धकोष्ठ दोनों अपचेके परिणाम हैं। अपचेसे किसीको कब्ज होती है और किसीको दस्त लगने लगते हैं। ऐसे बाथ और साथ ही खुराकके उपचारसे बहुत पुरानेसे पुराने अर्श बंद हो सकते हैं । बारबार बहुत थूँकका आना इस बाथसे बहुत करके बंद हो जाता है। निर्बल मनुष्य ऐसे बाथसे बलवान होते है। इस बाथसे बहुतोंका सन्धिवात मिट गया है। रक्तस्राव और रक्त-दोषमें यह बाथ बहुत उत्तम इलाज है। मस्तक दुखनेवाले मनुष्यको इस बाथके द्वारा बड़ा ही लाभ पहुँचेगा । स्वयं लुईकूने इस बाथको केनसर सदृश भयंकर रोगमें भी अनमोल समझता है। गर्भवती स्त्री इस बाथको लेगी तो उसे बालक होते समय थोड़ा दुःख भोगना पड़ेगा। बालक, जवान, बूढ़े आदि सब स्त्री-पुरुष इस बाथको ले सकते है ।

इसके सिवाय बाथ लेनेकी एक और दूसरी तरकीब है। वह कितने ही रोगोंमें अकसीर इलाज है। इस तरकीबको 'वेट-शीट-पेक' अर्थात् भीगे हुए चद्दरका बन्धन कहते हैं। इस बाथके लेनेकी यह रीति है कि खुली हवामें एक इतना बड़ा तख्ता या टेबिल रखनी चाहिए कि जिस पर मनुष्य चित सो सके। उस पर हवाके परिमाणके अनुसार चार या कम ज्यादा कम्बल लटकते हुए बिछा देने चाहिए। उन पर भीगी हुई दो साफ और मोटी चद्दर बिछा कर सिरहानेकी ओर कम्बलके नीचे एक तकिया रखदेना चाहिए। इसके बाद बीमारको नंगा करके और यदि वह चाहे तो उसे कमरमें एक छोटा कपड़ा पहना कर चद्दरोंके बीचमें सीधा सुला देना चाहिए। फिर उसके दोनों हाथोंको बगलमें रख कर चद्दर और कम्बलोंको एकके बाद एक उस बीमारके शरीर पर लपेट देना चाहिए। पैरों परके हिस्सेको अच्छी तरह पैरों पर लपेटना चाहिए । धूप हो तो भिगोया हुआ रूमाल बीमारके मुँह और मस्तक पर लपेट देना चाहिए। नाक सदा खुला रखनी चाहिए। बीमारको एक बार थरथरी मालूम होगी, पर फिर बहुत आराम मालूम

होगा और शरीरको सुहाने योग्य गरमी आ जायगी। ऐसी दशामें बीमार ५ से लेकर ६० मिनिट तक या ज्यादा देरतक रह सकता है। अन्तमें इतनी गरमी होती है कि पसीना आने लगता है। कई वार बीमार ऐसी स्थितिमें सो जाता है। भीगी हुई चद्दरसे निकलते ही बीमारको ठंडे पानीसे नहलानेकी आवश्यकता है। त्वचाकी अनेक बीमारियों पर यह उत्तम इलाज है। खुजली, दाद, अलाई, छोटी-माता, शीतला, साधारण फोड़े, बुखार आदि बीमारियों पर यह चद्दर-बन्धन बड़ा ही गुणकारी है। शीतला कैसी ही भयंकर क्यों न हो बहुत करके इस इलाजसे वह मिट जाती है। शरीर पर लाल चकते पड़ गये हों तो वे एक-दो वार इस बाथके लेनेसे दूर हो जाते हैं। इस बाथका स्वयं लेना या दूसरोंको लिवाना प्रत्येक मनुष्य बहुत ही आसानीसे सीख सकता है और अपने ही तजरबेसे इसकी कीमत कर सकता है। इस बाथमें त्वचाका सारा मैल चद्दरमें आ जाता है। इस लिए जो चद्दर एक वार काममें आ चुकी हो उसे खोलते हुए पानीमें धोकर साफ किये बिना उसी बीमार पर या दूसरे बीमार पर काममें न लानी चाहिए।

अखीरमें जलचिकित्साके सम्बन्धमें इतनी बात याद रखना आवश्यक है कि चिकित्सा की जा रही हो और कसरत, खुराक आदिकी सम्हाल न रक्खी जायगी तो पूरा-पूरा लाभ न होगा। सम्भव है कि कुछ भी लाभ न हो। सान्धिवातवाला मनुष्य, लुईकूनेका बाथ या चद्दर-बन्धन लेकर अखाद्य खाने लगे, खुली हवामें न रहकर गंदगीमें पड़ा रहे और शरीर द्वारा कसरत न करे तो अकेले बाथसे उसे कुछ फायदा न होगा। तन्दुरुस्तीके सारे नियम पालनेके साथ ही पानीके उपचार सहायक हो सकते है। यदि अन्यान्य आरोग्यके नियम पालनेके साथ साथ जलचिकित्सा की जावे तो शीघ्रताके साथ बीमार तन्दुरुस्त होता जाता है। इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

३ मिट्टीके उपचार।

जलचिकित्साके सम्बन्धमें हमें थोड़ा बहुत ज्ञान होगया। परन्तु कितनी ही बातोंमें पानीके इलाजसे भी मिट्टीके इलाज चमत्कारिक देखे गये हैं। हमारे शरीरका बहुतसा भाग मिट्टीका बना है, इस कारण यदि हमारे शरीर पर मिट्टीका प्रभाव पड़े तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। मिट्टीको सब पवित्र मानते हैं। दुर्गन्ध दूर करनेके लिए जमीनको मिट्टीसे लीपते हैं। सड़ी हुई जगह मिट्टीसे पूर दी जाती है। हाथोंको मिट्टीसे साफ करते है। यहाँतक कि गुप्त अंग भी मिट्टीसे पवित्र किये जाते है। योगी जन सारे शरीर पर मिट्टी लगाये रहते है। इस देश (नाताल) के लोग फोड़े-फुंसियों पर मिट्टीका प्रयोग करते है। मुर्दोंको मिट्टीके भीतर गाड़नेसे वे हवाको खराब नहीं कर सकते। मिट्टीकी इस महिमासे हम अनुमान कर सकते है कि मिट्टीमें कितने ही खास और उत्तम गुणोंका होना सम्भव है।

जैसे लुईकूनेने पानीके सम्बन्धमें बहुत विचार करके कितने ही अच्छे अच्छे लेख लिखे है वैसे ही जुस्ट नामके एक जर्मनने मिट्टीके सम्बन्धमें बहुत कुछ लिखा है। वह तो अपने विचार यहाँतक प्रकट करता है कि मिट्टीके उपचारसे असाध्य रोग भी मिट सकते हैं। उसका कहना है कि एक वार उसके पासके गाँवमें एक आदमीको साँपने काट खाया था। बहुतसे आदमियोंने समझ लिया कि वह मर गया। परन्तु इस गाँवके किसी शख्सने उन लोगोंसे कहा कि–इस विषयमें जुस्टकी सलाह ली जाय तो अच्छा होगा। ऐसा ही किया गया। जुस्टने उस आदमीको मिट्टीमें गड़वा दिया। इसके थोड़ी देर बाद देखा गया तो उस आदमीको सुध आगई थी। यह अघटित घटना है। परन्तु जुस्टको झूठ

लिखनेका कोई कारण नही है। मिट्टीमें गड़वानेसे बहुत गरमीका होना तो प्रकट बात है। परन्तु उस साँपके काटे पर मिट्टीके अदृश्य जन्तुओंका क्या प्रभाव पड़ा इसके जाननेका कोई साधन नहीं है। तब भी इतना तो जान पड़ता है कि मिट्टीमें विषको चूस लेनेका गुण है। इतना होने पर भी जुस्ट लिखता है कि किसीको यह न समझ लेना चाहिए कि साँपके काटे हुए सभी मिट्टीसे जी उठते है। परन्तु कोई खास मौके पर मिट्टीका इलाज करना आवश्यक है। बिच्छू और ततैयाके काटे पर मिट्टीका इलाज विशेष उपयोगी प्रतीत होगा। इनके डंको पर मैने स्वयं परीक्षा करके देखा है कि इस इलाजसे तुरंत आराम हुआ है। ऐसे समय डंक पर मिट्टीको ठंडे पानीमें मल कर गाढ़ी गाढ़ी पुलटिस बाँध देनी चाहिए और उस पर पट्टी बाँध देनी चाहिए।

नीचे लिखे हुए उदाहरणोंमें मैंने मिट्टीके उपचारका स्वयं अनुभव किया है। दस्तवालेके पैडू पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे दो तीन दिनमें आराम होगया। सिर दर्दवालोके सिर पर मिट्टीकी पुलटिससे तत्काल लाभ हुआ है। आँखों पर पुलटिस बाँधनेसे आँखोंका दर्द मिट जाता है। चोंट लग कर सूजन चढ़ गई हो, या न भी चढ़ी हो तो मिट्टीकी पुलटिससे दोनों दर्द आराम हो जाते है। कई वर्ष पहले मैं जब फ्रूटसाल्ट लेता तभी अच्छा रह सकता था। १९०४ में मिट्टीकी उपयोगिता पर मेरा ध्यान गया और तभीसे मुझे फ्रूटसाल्ट वगैरह किसी दिन न लेने पडे। जिसे बद्धकोष्ठ रहता है उसे पैडू पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे बड़ा लाभ होता है। पेटमें दर्द होता हो तो मिट्टी बाँधनेसे हलका हो जाता है। मिट्टीके बाँधनेसे अतिसार तक मिट जाता है। पैडू और सिर पर मिट्टीके बाँधनेसे सख्त बुखार तक दो-एक घंटेमें कम पड़ जाता है। फोड़े-फुंसी, खुजली, दाद वगैरह पर मिट्टी बाँधनेसे

प्रायः बहुत लाभ होता है। फोड़ोंसे रसी निकलने लगी हो तो मिट्टीकी उपयोगिता कम हो जाती है। जले पर मिट्टी बाँधनेसे जलन कम हो जाती है और सूजन नहीं चढ़ती। अर्शवालेको मिट्टीका बाँधना लाभ-कारी है। पाला पड़नेसे प्रायः हाथ-पैर सुर्ख होकर सूझ जाते है, उन पर मिट्टी बाँधनेका असर हुए बिना रह ही नहीं सकता। खुजलीवाली बादी पर मिट्टी गुणकारी है। दुखते हुए जोड़ों पर मिट्टी लगानेसे तुरंत लाभ होता है। इस तरह मिट्टीके बहुतसे प्रयोग करने पर मुझे जान पड़ा है कि घरू इलाजके तौर पर मिट्टी अनमोल चीज है।

सब प्रकारकी मिट्टीका एकसा गुण नहीं होता। सुर्ख मिट्टी विशेष गुणकारी जान पड़ी है। मिट्टीको हमेशा अच्छी जगहसे खोद कर लानी चाहिए। अगर मिट्टीमें गोबर बहुत हो तो उसे काममें न लेनी चाहिए। मिट्टी बहुत चिकनी न होकर थोड़ी चिकनी और रेतीली अच्छी होती है। उसमें किसी प्रकारका कचरा वगैरह न होना चाहिए। मिट्टीको बारीक चलनीमें छानकर सदा ठंडे पानीमें भिगो रखनी चाहिए। आटेको गूँदनेसे वह जितना कठिन रहता है उतनी ही कठिन मिट्टी भी रहनी चाहिए। मिट्टीको बिना इसतिरी किये हुए साफ बारीक कपड़ेमें बाँधकर जिस जगह आवश्यकता हो वहाँ पर पुलटिसके मुआफिक उसका उपयोग करना चाहिए। मिट्टी शरीर पर सूख न जाय इसके पहले उसे हटा लेना चाहिए। साधारण तौर पर २–३ घंटे एक पुलटिस चलती है। काममें आई हुई मिट्टी फिर काममें न लेनी चाहिए। काममें आया हुआ कपड़ा–यदि उसमें पीव-खून न लगा हो तो–फिर काममें लाया जा सकता है। पेड़ू पर मिट्टी रक्खी हो तब उस पर एक गरम कपड़ा रख कर पट्टा बाँध देना चाहिए। हर एक आदमी एक डब्बेमें मिट्टी भरकर रख छोड़े तो उसे ऐन वक्त पर इधर उधर भटकते फिरना न पड़ेगा। जब जरूरत हो तभी वह उसे काममें ला सकता है। बिच्छूके डंक पर जितनी जल्दी मिट्टी रक्खी जा सके उतना ही अच्छा है।

४ बुखार और उसके इलाज ।

इस प्रकार मुख्य उपचारोंके सम्बन्धमें थोड़ी बहुत जानकारी हुए बाद अब हम कुछ बीमारियोंके विषयमें थोड़ासा विचार करते हैं । इससे जान पडेगा कि इनके विषयमें अन्यान्य उपाय बताने और अलग प्रकरण लिखनेकी आवश्यकता नहीं है ।

बुखार शब्दका प्रयोग हमने शरीरके खूब गरम होनेके अर्थमें किया है। अँगरेजी वैद्योंने इसके बहुतसे भेद कर उन पर बड़े बड़े ग्रन्थ लिखकर बड़ा पीसना पीसा है । हमारे लौकिक हिसाबसे और इन प्रकरणोंमें बतलाये अनुसार प्रायः सारे बुखारोंमें एक ही इलाज काम कर सकता है। सादे बुखारसे लेकर ब्यूबोनिक प्लेगतकमें मुझे एक ही इलाजका अनुभव हुआ है और उसके परिणाम ठीक निकले है। १९०४ में आफ्रिकामें हम लोगोंमें भयंकर महामारी चल पड़ी थी । उसमें २३ मनुष्य बीमार होकर २४ घंटेमें २१ मर गये । बाकी प्लेगके दो बीमार अस्पतालमें भेज दिये गये । अखीरमें इन दोनोंमें भी एक ही बच पाया। इस पर मिट्टीकी पुलटिसका इलाज किया गया । इससे यह नहीं कहा जा सकता कि इस बीमारको मिट्टीसे ही लाभ पहुँचा, परन्तु यह कहा जा सकता है कि मिट्टीसे उसे कोई हानि न पहुँची । एक वार दो बीमारोंके फेंफड़ोंमें सूजन आकर उन्हें बुखार आगया । वे बेहोश होगये । उनमें एककी छाती पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधी गई । उसके गलेमें होकर खूनके छींछड़े गिरते थे । अस्पतालमें ले गये बाद डाक्टरके कहनेसे मालूम हुआ कि उसे पहले बहुत ही कम खुराक दी जाती थी और वह भी दूधकी ।

बुखारकी उत्पत्ति बहुत करके कोठेकी खराबीसे होती है, अत एव उसका पहला उपाय उपवास करना है । यह बिल्कुल बहम है कि निर्बल या

बुखारवाले मनुष्य न खानेसे और भी दुर्बल हो जायँगे । इस बातको हम पहलेके प्रकरणोंसे जान चुके हैं कि जितनी खुराक पचकर खून बन जाय वही कामकी है और बाकी पेटमें सीसेकी तरह पड़ी रहती है । बुखारवाले मनुष्यका कोठा बहुत ही मन्द चलता है, उसकी जबान सफेदी लिए हुए या काली होती है और ओठ सूखे रहते हैं । ऐसी स्थितिमें मनुष्यको भोजन कराया जाय तो बुखार और बढेगा—वह कुछ पचा न सकेगा । खानेको न देनेसे कोठेको अपना काम करनेका मौका मिलता है । इस लिए उसे एक-दो या ज्यादा दिन तक उपवास कराना चाहिए । उपवासके दिनोंमें लुईकूनेके कम-से-कम दो बाथ सदा लिवाने चाहिए । रोगीसे बाथ न लिये जा सकें तो उसके पेडू पर मिट्टी बाँधनी चाहिए । सिर दुखता हो या गरम हो तो उस पर भी मिट्टीका पट्टा रखना चाहिए । बीमारको ढका हुआ परन्तु खुली हवामें रखना चाहिए । भोजनके समय उसे गरम या ठडा नारंगीका रस पिलाना चाहिए । रस छना हुआ और उसमे गरम या ठंडा पानी मिला हुआ होना चाहिए । जहाँतक हो सके उसमें शक्कर न डाली गई हो । इस रसका बड़ा अच्छा असर होगा । यदि बीमारके दाँत न खटा जाते हों और वह पी सकता हो तो उसे ऊपर बताई हुई रीतिसे नीबूका रस पिलाना चाहिए । इसके बाद दूसरी बार उसे मसला हुआ आधा केला खिलाया जा सकता है । केलेको मसल कर उसमें एक चम्मच ओलिव-आइल और आधा चम्मच या एक चम्मच नीबूका रस डालना चाहिए । तीनोंको अच्छी तरह मिलाकर बीमारको खिलाना चाहिए । प्यास लगे तो गरम कर ठंडा किया हुआ पानी या नीबूका रस पिलाना चाहिए । ठंडा पानी पिलाना उचित नहीं है । पानीके साफ करनेका उपाय पहले प्रकरणमें बतलाया जा चुका है । बीमारको बहुत कम कपड़े पहनाने चाहिए और उन्हें सदा पलटते रहना चाहिए । ओढ़नेके लिए पुरता कपडा हो तो ज्यादा कपडोंकी जरू-

रत नही रहती । इस तरहके उपचारसे मोतीझरेके ऐसे भयंकर बुखारवाले रोगियोंको भी आराम हुआ है । इतना ही नहीं, इस समय वे निहायत अच्छी तन्दुरुस्ती भोग रहे है । क्विनाइन आदि औषधि लेनेवाले मनुष्य नीरोग जान पड़ते है; परन्तु दूसरी बीमारियाँ उन्हें घेरे रहती हैं । खास करके मलेरियावालोंको क्विनाईनसे आराम होना माना जाता है; परन्तु उन्हें मलेरियासे शायद ही छुटकारा मिलता है और ऊपर लिखे अनुसार कुदरती इलाज करनेसे मलेरियाके बीमार बिल्कुल अच्छे हुए मैंने देखे है ।

बुखारकी दशामें दूध पर आधार रखनेवाले बहुतोंको मैने देखा है, परन्तु मेरे अनुभवसे बुखारकी प्रारम्भिक दशामें दूध पिलाना हानि करता है, उसे पचाना भी कठिन हो पड़ता है । दूध पिलाना ही पड़े तो गेहूँकी काफी या चावलके थोड़ेसे आटेको पानीके साथ पका कर पिलाना चाहिए। परन्तु हठीले और तेज बुखारमें तो दूध पिलाना ही न चाहिए। ऐसे समय नीबूका रस बड़ा चमत्कारिक होता है । यह बात अनुभव सिद्ध है । जब बीमारकी जबान साफ हो तब केलेकी खुराकसे प्रारंभ करना चाहिए । केला भी ऊपर बताये अनुसार बना कर ही खिलाना चाहिए। बीमारको दस्त न आते हों तो दवा देनेकी जगह थोड़ा टंकणखार डालकर गरम पानीकी पिचकारी लगानेसे पेट साफ हो जायगा और फिर ओलिव-आइलवाली खुराक साफ दस्त ला देगी ।

५ कब्ज-संग्रहणी-दस्त-अर्श ।

साधारण तौर पर यह बात अचरज भरी मानी जायगी कि इस प्रकरणमें चार बीमारियोंका नाम एक साथ लिखा गया है; परन्तु, असलमें इन चारों बीमारियोंमें निकटका सम्बन्ध है और हमारे बिना दवाके इलाज भी चारोंके लिए करीब करीब एक ही है । जब कोठे पर बहुत बोझ आ पड़ता है तब शरीरके गठनके अनुसार किसीको कब्ज हो जाती है अर्थात् नियमित दस्त नहीं होता और न ठीक तौर पर होता है । दस्त जाते समय जोरसे करॉझना पड़ता है । कुछ अर्सेतक ऐसा होनेसे खून गिरने लगता है या कॉच छिटकती है और किसी समय अर्श हो जाता है । किसीको, कोठे पर ज्यादा बोझ पड़नेसे दस्त लग जाते है। यदि ये दस्त बहुत दिनोंतक और बार बार हुआ करें तो उसे संग्रहणी कहते हैं। किसीको मरोड़ी हो जाती है । मरोड़ीके समय पेटमें दर्द होता है और ऑव गिरती है ।

इनमेंसे प्रत्येक बीमारीवालेको भूख कम लगती है, शरीर फीका पड़ जाता है, शक्ति नहीं रहती, जबान बिगड़ी रहती है, और श्वासमें बदबू आती है । कितनेहीका सिर दुखता है और कितनेहीको अन्यान्य रोग भी हो जाते है । कब्ज एक ऐसी साधारण बीमारी है कि जिसके लिए सैकड़ों दवाइयॉ और चूरन बने हैं । मधर्स-सिगल-सिरप, फ्रूटसाल्ट वगैरह दवाका मुख्य काम ही कब्ज दूर करनेका है।इन दवाओंसे कब्ज मिटती हुई जान पड़नेसे हजारों मनुष्य इन दवाओंके पीछे हैरान होते हैं । साधारण हकीम या डाक्टर भी कहेगा कि कब्ज आदि बीमारीकी जड़ बदहज्मी है और बदहज्मीके कारण दूर कर दिये जायँ तो कोई बीमारी न रहे । इन लोगोंमें जो प्रामाणिक है वे तो साफ तौर पर कहते हैं

कि हमारे रोगी अपनी कुटेवोंको तो छोड़ना चाहते नहीं हैं और बीमारी मिटाना चाहते हैं। इसी लिए चूरन, मिक्श्चर वगैरह बनाने पड़ते हैं। आजकल विज्ञापनोंमें ऐसा भी प्रसिद्ध किया जाता है कि हमारी दवा खानेवालेको किसी प्रकारके परहेज करनेकी जरूरत नहीं है—बीमार मनमाने आहार-विहार कर सकते है। उन्हें केवल दवा लेनेसे आराम हो जायगा। इन प्रकरणोंके पढ़नेवाले जान सकेंगे कि इस प्रकारके विज्ञापन केवल धोखा देनेवाले है। जुलाब वगैरहका हमेशा बुरा फल होता है। हलकेसे-हलके जुलाब भी कब्जको मिटाकर शरीरमें दूसरे जहर उत्पन्न करते हैं। जुलाब लेकर मनुष्य अपनी पुरानी आदतको छोड़दे और फिर उसे जुलाब न लेना पड़े तो जुलाबसे लाभ हुआ कहा जा सकता है; परन्तु सदाकी भाँति अपनी आदतको जारी रखनेसे तो सम्भव है कि—कब्ज, संग्रहणी आदिके मिट जाने पर भी—बीमारको कोई और नई ही बीमारी हो जाय।

अब ऊपर लिखी हुई बीमारियोंके इलाज पर एक दृष्टि डालिए। इनका पहला इलाज तो यह है कि बीमारकी खुराक कम कर दी जाय और उसे भारी खुराक—बहुत घी, शक्कर, रबड़ी वगैरह—खानेको न दी जाय। शराब, भंग, चुरुट वगैरहका व्यसन हो तो वह छुड़ा दिया जाय। उसे खानेको मैदेकी रोटियाँ न दी जाकर खास कर हरा मेवा और उसके साथ ओलिव-आइल दिया जाय। उससे चाय, काफी कोको आदि छुड़ा दिये जायँ।

इलाज शुरू करनेके पहले बीमारको ३६ घंटेका उपवास कराकर इसके बीचमें या इसके बाद सोते समय पेड़ू पर मिट्टीके पट्टे बाँधे जायँ और दिनमें एकसे दो तक लुईकूनेका बाथ लिवाया जाय। हमेशा कमसे-कम दो घंटेतक उसे चलाया फिराया जाय। ऐसा करनेसे निःसन्देह बीमारको फौरन् फायदा पहुँचेगा। ऐसे इलाजसे सख्त कब्ज, सख्त पेचिश

सख्त अर्श और सख्त संग्रहणी-को आराम पहुँचा मैंने देखा है। अर्शके लिए इतना कहना है कि इस इलाजसे अर्श बिल्कुल मिट नहीं जाता; परन्तु वह तकलीफ बिल्कुल नहीं देता। यहाँतक कि आदमीको इतना खयाल भी नहीं रह पाता कि मुझे अर्श (मसे) है भी। पेचिश-वालेको इतना याद रखना चाहिए कि जबतक आँव या खून गिरते हों तबतक वह खाना बिल्कुल न खाय। और जब कुछ खानेकी इच्छा हो तब गरम पानीमें नारंगीका छना हुआ रस मिला कर पिये। ऐसा करनेसे सख्त-से-सख्त पेचिश बहुत ही थोड़े समयमें मिट जायगी और बीमार तक-लीफ न भोगेगा। पेचिशके वक्त सख्त मरोड़ियाँ उठती हों तो बोतलमें खूब गरम पानी भरके उससे या गरम ईंटसे पेट सैकना चाहिए। इससे दर्द मिट जायगा। इसके सिवाय और बीमारोंको जैसे खुली हवामें रखनेकी आवश्यकता है वैसे ही इन बीमारीवालोंको भी खुली हवामें रखनेकी जरूरत है।

कब्जमें नीचे लिखा हुआ मेवा खास गुण करता है।

अंजीर, फ्रेंच-प्लम्स (बेर), मुनक्का, काली-मुनक्का, नारंगी, अंगूर (हरीदाख)।

इस कहनेका यह मतलब नहीं है कि भूख न हो तब भी इन मेवोंको खाना ही चाहिए। मरोड़ी चल रही हो, और मुँह खराब हो तो उस समय इन मेवोंका खाना भी हानिकारक ही है। जब खानेकी जरूरत जान पड़े तब ही इनका खाना गुणकारी है। ऊपर लिखे वाक्यका इतना ही अर्थ करना चाहिए।

६ छूतके रोग–शीतला (चेचक)।

बुखार आदि कुछ बीमारियोंके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके। सब बीमारियोंके विषयमें सूक्ष्म विचार करना इन लेखोंकी मनशा नहीं है। और भी एक बात है, जब सब बीमारियोंका बहुत अंशोंमें एक ही कारण समझा जाता है और प्रायः एक ही उपाय समझा जाता है तब एक-एक रोग पर अलग अलग लेख लिखनेकी आवश्यकता भी नहीं है। शीतलाके समान अन्य छूतवाले रोगोंकी उत्पत्तिका कारण भी हम एक ही मानते है, अतएव उनका भी अलग विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती; तो भी शीतला पर एक प्रकरण लिखना अयोग्य न होगा।

शीतला निकलनेसे हम बहुत ही डरते है। इसके सम्बन्धमें सैकड़ो वहम फैल रहे है। हिंदुस्तानमें तो शीतला एक देवी ही ठहरा दी गई है। उसके नामकी असंख्य मनुष्य मानता करते है। यह बीमारि दूसरी बीमारियोंकी भाँति खूनके बिगड़नेसे होती है और खूनका बिगाड़ कोठेके बुखारसे शुरू होता है। शरीर शीतला द्वारा अपने भीतर भरे हुए जहरको बाहर निकालता है। यदि यह विचार ठीक हो तो शीतलासे डरनेकी कोई जरूरत नहीं है। यदि शीतला छूतसे लग ही जाती हो तो जितने मनुष्य शीतलाके रोगीका स्पर्श करें उन सबको शीतला निकल आनी चाहिए। परन्तु हम देखते है कि ऐसा नही होता। इससे शीतलाका भय रखनेकी जरूरत नहीं है, केवल सावधानी रखनेकी आवश्यकता है। यह नहीं कहा जा सकता कि शीतलाकी छूत होती ही नहीं है। जिसका शरीर छूत लगने योग्य होगा वह यदि शीतलाके रोगीका स्पर्श करे तो उसे रोग लग जाना संभव है। यही कारण है कि जहाँ शितला निकलती है वहाँ पर बहुतसे मनुष्य एक साथ इस रोगके पंजेमें फँस जाते है। इस भाँति शीतलाको

छूतका रोग मानकर इस पर टीका लगाना अच्छा बतलाया जाता है। और लोगोंको बहकाया जाता है कि टीका लगानेसे शीतला रुक जाती है। टीकेकी लस गायके स्तनसे निकाली जाती है। इस लसको हमारे शरीरमें दाखिल किया जाता है। फिर टीकेसे लस निकाल लेते हैं। इससे यह लाभ बतलाया जाता है कि चेचक नहीं निकलती। पहले यह माना जाता था कि एकबार टीका लगाये बाद शीतला नहीं निकलती। परन्तु जब जान पड़ा कि टीका लगाये बाद बहुत लम्बे समय तक शीतलासे मनुष्य बचा नहीं रहता, तब यह कहा गया कि अमुक समयके बाद फिर टीका लगाना चाहिए। अब ऐसा नियम है कि जहाँ जहाँ शीतला निकले वहाँ वहाँ पर टीका लगाये हुए और बिना टीकेवाले सभी मनुष्योंको फिर टीका लगाना चाहिए। इस तरह बहुतसे मनुष्य ऐसे देखनेमें आये हैं कि जिन्होंने पाँच-छह या इससे भी ज्यादा बार टीके लगवाये हैं।

टीका लगाना बड़ा ही जंगली रिवाज मालूम होता है। इस जमानेमें चलते हुए बहमोंमें एक यह भी जहरी बहम है। ऐसे बहम उन आदमियोंमें भी नहीं देखे जाते जो जंगली कहे जाते है। इस बहमके हिमायतियोंको इतनेसे संतोष नहीं हुआ कि जिसकी इच्छा हो वह टीका लगवाये। वे सबको ही टीका लगवानेके लिए कानूनन मजबूर करते हैं। जो टीका नहीं लगवाते उन्हें कानूनी कार्रवाई कर सख्त सजा दी जाती है। टीकेकी खोज १७९८ में हुई है। इससे पाठक जान सकते हैं कि यह बहम पुराना नहीं है। इतनेसे थोड़े अर्सेमें लाखों मनुष्य इस बहममें फँस गये हैं कि जिसने टीका लगाया वह शीतलासे बच गया। परन्तु ऐसा माननेके लिए कोई प्रबल कारण नहीं है। कोई ऐसा नहीं कह सकता कि टीका न लगानेसे बड़ी शीतला अवश्य ही निकलती है। किन्तु इसके विपरीत टीका लगानेवालोंके शीतला निकलनेके अनेक उदाहरण मिलते हैं। टीका न लगानेवालोंके शीतला निकलनेके उदा-

हरणोंसे यह नहीं कहा जा सकता कि यदि टीका लगाया जाय तो मनुष्य शीतलासे मुक्त रह सकता है।

टीका एक गंदा इलाज है। इसमें गायकी लस हमारे शरीरमें पहुँचाई जाती है। इतना ही नहीं मनुष्यकी लस भी पहुँचाई जाती है। साधारण तौर पर लसको देखकर कई लोग उलटी कर देते है। हाथको यदि लस लग जाय तो वे साबुनसे साफ किये जाते हैं। अगर कोई हमें लस खानेको कहे तो इस बातसे हमारा जी मचलाने लगेगा। ऐसी बात कोई हँसीमें भी कहेगा तो हम उससे लड़नेको तैयार हो जायँगे। इतना होने पर भी शायद् ही कभी किसीने इस बात पर विचार किया होगा कि हम टीका लगवा कर लस (सड़ा हुआ खून) खाते हैं ! सब कोई जानते होंगे कि कितनी ही बीमारियोंमें दवा या प्रवाही खुराक शरीरके द्वारा भीतर पहुँचाई जाती है। उसका असर मुँहसे ली हुई खुराककी अपेक्षा शीघ्र होता है। मुँहसे ली हुई वस्तु एकदम रक्तमे जाकर नहीं मिल जाती; परन्तु शरीर द्वारा पहुँचाई हुई वस्तु फौरन् खूनमें जा मिलती है। इतना नहीं, इस उपायसे भीतर पहुँचाई हुई थोड़ीसी भी दवाका तत्काल प्रभाव पड़ता है। इस तरह शरीर द्वारा ली हुई दवा या खुराक खानेके समान ही है। इतना होने पर भी शीतलासे बचनेके लिए हम लस खाते है। कहावत है कि डरनेवाले मौतसे पहले ही मर जाते है। वैसे ही माता निकलेगी तो मर जायँगे या बद्-सूरत हो जायँगे, इस भयसे टीका लगवा कर हम पहले ही मर रहते है।

इस प्रकार लस लेनेमें मुझे तो यह जान पड़ता है कि हमें धर्म-भ्रष्ट होनेकी भी परवा नही है। मासाहारी मनुष्योंकी भी रक्त खानेकी इजाजत नही है। और जीवित प्राणीका रक्त या मांस तो खाया ही नहीं जा सकता। लस भी जीते हुए प्राणीका खून है और, वह भी

सड़ाया हुआ है। वही सड़ा खून शरीरके द्वारा हमें खिलाया जाता है। इस प्रकार खून खानेकी एवजमें हजार वार शीतला निकले या तुरंत मौत आ जाय तो भी आस्तिक मनुष्य उसे ही पसन्द करेगा।

इंग्लेंडके कितने ही विचारशील मनुष्योंने टीकेके नुकसानोंकी खोज की है। वहाँ पर टीकेका विरोध करनेवाली बड़ी भारी सभा कायम हुई है। उसके सभासद् टीका नही लगवाते। वे टीका लगानेके अनिवार्य कानूनका विरोध करते हैं। कितने ही इस बात पर जेलमें जा चुके हैं। वे औरोंको भी समझाते है कि टीका न लगवाना चाहिए। इस विषयके कई ग्रन्थ लिखे गये हैं। इस पर खूब वाद-विवाद हुआ है। टीकेके विरोधमें वे लोग नीचे लिखे हुए कारण बतलाते हे:—

(१) गाय या बछड़ीके स्तनमेसे लस निकालनेकी क्रियामें लाखों जीवित पशुओं पर बड़ी ही क्रूरता की जाती है। ऐसी निर्दयता मनुष्य-जातिके योग्य नहीं है। इससे मनुष्यका कर्तव्य है कि कुछ लाभ होता हो तो भी वह इस बेरहमीसे निकाली हुई लसको उपयोगमें न लावे।

(२) इस लससे लाभ तो कुछ होता नही, उलटी हानि होती है—मनुष्योंको दूसरे रोगोंकी छूत आ लगती है। वे समझते है कि शीतलाके फैलावके बाद दूसरे रोग फैले है।

(३) मूल पास मनुष्योंके रक्तसे तैयार की हुई होती है, इस लिए वे सब पासें जिन जिन मनुष्योंके रक्तसे बनाई जाती है उनमें, उन उन मनुष्योंके अन्य अन्य रोगोंकी छूतका भी आ जाना संभव है।

(४) ऐसा विश्वास नहीं दिलाया जा सकता कि टीका लगानेसे मनुष्यको शीतला-रोग होगा ही नही। इस टीकेका निकालनेवाला डाक्टर जेनर कहा करता था कि एक हाथमें टीका लगानेसे मनुष्य सदाके लिए रोगसे छुटकारा पा जाता है। इससे जब पूरा लाभ होता नहीं देख पड़ा तब यह स्थिर किया गया कि दोनों हाथोंमें

टीका लगानेसे शीतला नहीं निकलती। इसके बाद दोनों हाथोंमें एकसे ज्यादा टीका लगानेकी बात कही जाने लगी। फिर भी जब शीतला निकलने लगी, तब यह कहा गया कि टीका लगाये बाद यह विश्वास नहीं दिलाया जा सकता कि सात वर्षके बाद भी शीतला न निकलेगी। अब सातकी जगह तीन ही वर्ष कहे जाते हैं। इस तरह डाक्टर लोग स्वयं भी अबतक कुछ निर्णय नहीं कर सके है। असल बात तो यह है कि टीका लगानेसे शीतला न निकलेगी ऐसा मानना बिल्कुल बहम हे–मिथ्या है। यह कोई साबित नहीं कर सकता कि टीका लगानेसे जिन्हें शीतला न निकली उन्हें टीका न लगानेसे अवश्य ही निकलती।

(५) अखीरी दलीलमें वे कहते है कि लस लगाना बिल्कुल गंदा-रिवाज हे और गंदगीसे गंदगीका दूर किया जाना मानना निरा जंगलीपन है। ऐसी ही अन्यान्य दलीलोंसे इस सभाने अँगरेजी प्रजा पर बड़ा अच्छा प्रभाव डाला है। इंग्लेंडमें एक ऐसा शहर है जहाँकी बसतीका बहुत बड़ा हिस्सा टीका नहीं लगवाता। इस शहरके लोगोंमें गिनतीके हिसाबसे रोग बहुत कम देखनेमें आता है। इस सभाके परिश्रमी सभासदोंने खोज करके सिद्ध कर दिया है कि डाक्टर लोग स्वार्थ-वश टीकेके बहमको दूर नही होने देते। उन्हें इसमें प्रतिवर्ष प्रजाकी ओरसे हजारों पौंडकी आय होती है। वे, जानमें या अजानमें, टीकेसे होती हुई हानिको नहीं देखते। परन्तु कितने ही डाक्टरोंने स्वय ऐसा ही मत प्रकट किया है और कितने ही तो टीकेसे सख्त खिलाफ हैं।

कुछ लोग कहेंगे कि टीका जब इस तरह हानि पहुँचाता है तब क्या हमें न लगवाना चाहिए ? इसका उत्तर मै तो निर्भय होकर यही दूँगा कि ‘ नही ’। इतना होने पर भी एक अपवाद है। मेरा कहना यह है कि जान–बूझ कर अपनी इच्छासे तो किसीको भी टीका न लगवाना चाहिए।

परन्तु जहाँ हम रहते है और वहाँ टीका लगानेका कानून है तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम टीका लगवालें। यहाँ (आफ्रिकामें) टीकेके कानूनको तोड़ना महा भयंकर जोखम उठानेके बराबर है। और यदि हम कानूनका मुकाबिला करते हैं तो हम पर भारी इलजाम लगाये जाते हैं—जान-बूझकर सार्वजनिक आरोग्यको जोखममें डालनेका हम पर दोषारोप किया जाता है। ऐसी स्थितिमें हमारा कर्तव्य है कि जिस बसतीका बड़ा हिस्सा टीका लगवानेमें फायदा समझता हो और हम उस बसतीमें रहते हों तो उस बड़े भागको हम भयग्रस्त न होने दें—हमें ऐसे काम करने चाहिए जिनसे उस भागको भय न पैदा हो। जो मनुष्य मेरे बताये हुए कारणसे टीकेमें धर्महानि समझता हो और वह अकेला ही टीकेके विरुद्ध हो तब भी उसे कानूनके विरुद्ध होकर सकट उठाने चाहिए। जो मनुष्य केवल शरीर-सुखके विचारसे टीका न लगवाना चाहता हो उसे एकाएका कानूनके विरुद्ध न होना चाहिए। ऐसे मनुष्यमें बहुत ज्ञान और अपना मत दूसरेको समझा सकनेकी शक्ति होनी चाहिए। उसे लोक-मतको पलटनेके लिए तैयार होना चाहिए। जो मनुष्य ऐसा नहीं कर सकता वह अपनी तबीयतको ही ठीक रखनेके लिए लोकमतके विरुद्ध नही हो सकता। बहुतसे काम हमें पसन्द नही आते तथापि—जिस मंडलमें हम रहते हों उसके लिए—हम उन्हें करते है। समाजके सुभीतेके लिए हमें अपने सुभीतोंको दूर रख देना पड़ता है। यह एक साधारण नियम है कि बहुमतके सामने एक ही मनुष्य हो सकता है; परन्तु ऐसे मोके धर्म या नीतिके सम्बन्धमें ही मिल सकते है। जिसका कोई मत न हो और ऐसे लेखोंसे उत्तेजित होकर वह यदि अपने आलसीपनके कारण टीका नहीं लगवाना चाहे तो ऐसे मनुष्यको कानूनके अधीन होना चाहिए।

टीका न लगवानेवालेको स्वच्छता वगैरेहके नियम समझ कर बराबर पालना चाहिए। जो मनुष्य शीतलाकी लस नही लेना चाहता, परन्तु

विषय-सेवन द्वारा उसकी लस लेता है, या आरोग्यके अन्यान्य नियमोंका भंग कर दुःख भोगता है, उसे कोई अधिकार नहीं है कि–जिस देश या समाजमें टीका लगवाना आरोग्यका नियम समझा जाता है–उसके वह विरुद्ध खड़ा हो।

इस प्रकार शीतलाके सम्बन्धमें विचार कर टीकेकी हानियाँ दिखलाई गई। अब शीतलाको रोकनेके उपायोंके सम्बन्धमें विचार करनेकी आवश्यकता है। उन मनुष्योंको शीतला होना ही सम्भव नहीं है कि जो हवा, पानी और खुराकके सम्बन्धमें बतलाये हुए नियमोंको पालते हैं, क्योंकि उनके खूनमें शीतलाके रोगाणुओंको नष्ट कर देनेका गुण होता है।

जिन्हें शीतला निकली हो उनके लिए भिगोई हुई चद्दर (वेट-शीट-पेक) का उपचार एक चमत्कारी दवा है। इससे जलन कम होगी और निकले हुए व्रण थोड़े ही दिनोंमें हलके पड़ जायेंगे। उन पर मल्हम वगैरहके लगानेकी कुछ जरूरत नहीं है। यदि एक-दो जगह मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेका मौका हो तो बाँध देनी चाहिए। खुराकमें भात, नीबू और हलका मेवा रुचिके अनुसार खाना चाहिए। हलके मेवेके कहनेका यह अभिप्राय है कि शीतलाकी गरमीके समय खिजूर, बादाम आदि पौष्टिक मेवा खाना उचित नही है। 'वेट-शीट-पेक' से एक हप्तेके भीतर-भीतर शीतलाके व्रण हलके हो जाने ही चाहिए। यदि न हों तो समझना चाहिए कि अब भी शरीरमें जहर भरा हुआ है और वह निकलता जा रहा है। ऐसा माननेके लिए कोई कारण नही है कि शीतला महारोग है; बल्कि वह तो इस बातकी निशानी है कि शरीरमें भरा हुआ जहर निकल कर शरीर आरोग्य लाभ कर रहा है।

यह विचार बहुतसे रोगोंके सम्बन्धमें लागू पड़ता है; परन्तु शीतलाके सम्बन्धमें विशेष लागू पड़ता है। बीमारी मिटे बाद बीमार निर्बल हो जाता है। कितने ही रोगी तो पीछेसे अन्यान्य बीमारियोंसे तकलीफ पाते हैं।

इसका कारण बीमारी नहीं होती; परन्तु बीमारीको दूर करनेके लिए किये हुए विविध उपचार हैं । बुखारमें जो किनाइन ली जाती है उससे कान बहरे हो जाते है, किसीको 'क्विनिनिझम' नामक भयंकर बीमारी हो जाती है । व्यभिचारसे पैदा हुए रोगोंको दूर करनेके लिए पारे आदिका उपयोग किया जाता है, परन्तु इसके साथ ही यह किसीसे छिपा हुआ नहीं है कि पारेसे उत्पन्न होनेवाले अन्य रोगोंसे मनुष्य सदा पीड़ित रहते हैं । इससे सिद्ध होता है कि दवा लेनेसे बीमारी नहीं मिटती; किन्तु अन्यान्य रोग भी हो जाते हैं । कब्ज पर जुलाब लेनेवालोंको अर्श हो जानेके अनेक उदाहरण देखे गये है । इस लिए बीमारीके कारणोंको ढूँढ कर उन्हें रोकना चाहिए और बीमारीको दूर करना चाहिए । इसके बाद कुदरती नियमोंका अच्छी तरह पालन करना चाहिए । इसके समान कोई भस्म नहीं है । धातुओंको मार कर लोहभस्म आदि भस्में तैयार की जाती हैं और समझा जाता है कि ये अकसीर इलाज हैं; परन्तु यह बात झूठ है । यह बात जरूर है कि इनमें गुण है; परन्तु इनके असरसे जितने दर्जे शरीर अच्छा हुआ जान पड़ता है उतने ही दर्जे मनोविकार बढ़ जाते है । मतलब यह कि इनसे मनुष्यको नुकसान ही होता है । शीतलाके रोगीके लिए इस दवाका लेना विशेष उपयोगी माना जाता है । शीतला एकवार निकले बाद बहुत करके रोगीको फिर नहीं निकलती । क्योंकि उसके शरीरमेंसे सारा विष निकल कर वह प्रायः बहुत ही तन्दुरुस्त हो जाता है ।

जब शीतला मुरझा कर उसके व्रण सूख जावें तब बीमारके शरीरमें सदा ऑलिव-आइल लगाते रहना चाहिए । उसे हमेशा नहलाना चाहिए । ऐसा करनेसे शीतलाके व्रण बिल्कुल मिटकर उन पर नई चमड़ी आ जायगी ।

७ छूतकी और और बीमारियाँ।

शीतलाके सम्बन्धमें अच्छी तरह विचार किया जा चुका। इसी प्रकार अराई, छोटीमाता वगैरहको भी शीतलाकी छोटी बहिनें समझनी चाहिए। जिस प्रकार ये सब छूतकी बीमारियाँ है उसी प्रकार प्लेग, कॉलेरा, पेचिश आदि भी छूतकी बीमारियाँ हैं। पर विशेष यह है कि शीतलाकी तरह हम इन बीमारियोंसे नहीं डरते। कारण इन बीमारियोंसे मौत नहीं होती; और न शरीर ही बे-डोल होता है। इसके सिवाय बाकी सब असर इनका शीतलाके ही समान होता है। इनकी छूत भी शीतलाके ही ऐसी होती है। इन बीमारियोंमें ठंडे पानीके इलाज और 'वेट-शीट-पेक' बड़ा लाभकारक है। ऐसे समयमें खुराक बहुत ही हलकी और सादी खानी चाहिए। केवल हरे मेवेसे यदि काम चलाया जा सके तो ये बीमारियाँ बहुत जल्दी कमजोर पड़ जाती है। प्लेग महा भयंकर बीमारी है। १८९६ से हिन्दुस्तानमें इस रोगसे लाखों मनुष्य मर चुके है। डाक्टरोंने बहुत कुछ सिरपच्ची की; परन्तु वे इसका कोई उपाय न खोज सके। इस समय शीतलाके टीकेके सदृश इसका भी टीका लगाया जाता है। जब टीका लगाया जाता है तब प्लेगका ज्वर बहुत हलका पड़ जाता है, उस समय डाक्टर लोग समझाते हैं कि जिनके शरीरमें इस लसका प्रवेश हो चुका है उन्हे प्लेग नहीं हो सकता। यह भी एक शीतलाके टीकेके ऐसा ही ढोंग है और उतना ही पाप-पूर्ण है। जिस भाँति शीतलाके टीकेके विषयमें कहा गया है कि टीका न लगानेसे यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता कि शीतला निकलेहीगी उसी भाँति प्लेगके टीकेके सम्बन्धमें भी यही कहा जा सकता है। प्लेगकी अभीतक कोई दवा नहीं निकली है, इस लिए इसमें पानीके इलाजसे लाभ होगा ही ऐसा निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता; परन्तु

जिसे मौतका डर नहीं है और जो भगवान् पर भरोसा रखते हैं उनके लिए नीचे लिखा हुआ उपाय बतलाया जा सकता है:-

(१) बुखार आनेके समय या उसके थोड़े भी चिन्ह जान पड़ने लगे तब फौरन् वेट-शीट-पेक लेना चाहिए ।

(२) गाँठकी जगह मिट्टीकी भारी पुलटिस बाँधनी चाहिए ।

(३) बीमारको खानेको न दिया जाना चाहिये ।

(४) यदि खुश्की जान पड़े तो नीबूका ठंडा पानी पिलाना चाहिए।

(५) बीमारको खुली और साफ हवामें सुलाना चाहिए ।

(६) उसके पास एक आदमीके सिवाय दूसरेको न जाने देना चाहिए । बीमार यदि किसी अन्य इलाजसे बच सकता है तो वह इस इलाजसे भी अवश्य बच सकेगा ।

प्लेगकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें अब तक कोई निश्चित बात मालूम न हुई। बहुतोंका मत है कि यह बीमारी चूहोंसे फैलती है। यह बात निराधार नहीं है। जहाँ प्लेग हो वहाँ पर चूहेवाले घरको साफ करनेकी बड़ी जरूरत है । अनाज आदिको इस तरह रखना चाहिए कि वह चूहोंको खानेको न मिल सके और न वे आ पावें। चूहोंके बिलोंको बन्द कर देना चाहिए। जिस घरसे चूहे न हटाये जा सकें उस घरको ही खाली कर देना चाहिए। परन्तु प्लेग न हो इसके लिए सबसे अच्छी बात तो यह है कि मनुष्यको पहलेसे ही सावधान रहना उचित है। उसे पवित्र, उत्तम और थोड़ा भोजन करना चाहिए। व्यसन छोड़ देने चाहिए। कसरत करते रहना चाहिए । खुली हवामें रहकर मकानको साफ-सुथरा रखना चाहिए और स्वयं खूब स्वच्छताके साथ रहना चाहिए । जिससे कि उसे प्लेगकी हवा छूने ही न पावे । मनुष्यको इस भाँति सदा ही स्वच्छ रहना चाहिए; परन्तु प्लेगके समय तो खास तौरसे स्वच्छता पर ध्यान देनेकी आवश्यकता है ।

प्लेगसे भी विशेष भयंकर और फौरन उत्पन्न होनेवाला एक रोग संनिपातज्वर है । जिसे अंग्रेजीमें 'न्यूमोनिक-प्लेग' कहते हैं । इसमें बीमारका दम उखड़ जाता है, बुखार बड़े जोरका चढ़ आता है, और बीमार लगभग बे-होश हो जाता है। इस कालज्वरसे मनुष्य शायद ही बच पाता है। १९०४ में यही प्लेग जोहान्सबर्गमें हुआ था। वहाँ पर २३ मनुष्योंमेंसे केवल १ मनुष्य बच सका था। उसका कुछ हाल पहले लिखा जा चुका है । इस बीमारीके लिए भी ग्रन्थि-प्लेगके लिए बतलाया हुआ इलाज उपयोगी होगा । परन्तु इसमें पुलटिस सीनेके दोनों हिस्सों पर बाँधनी चाहिए । बीमारको यदि 'वेट-शीट-पेक' में रखनेका समय न रहा हो तो उसके शिर पर मिट्टीकी बारीक पुलटिस रखनी चाहिए । इस रोगके भी इलाज करनेकी अपेक्षा इसे पहलेसे ही रोकनेका प्रयत्न करना सहज और उत्तम है । वे प्रयत्न प्लेगके प्रकरणमें बतलाये जा चुके हैं । उनका उपयोग करना बुद्धिमानी है।

हैजेकी बीमारी हमें बड़ी भयंकर जान पड़ती है; परन्तु असलमें वह प्लेगके समान भयंकर नहीं है। वह प्लेगसे बहुत ही हलकी है । इसमें 'वेट-शीट-पेक' काम नहीं देता; क्योंकि इसमें बीमारके गोले चढ़ जाते है और जाँघोंमें गाँठें बँध जाती है। ऐसे समय पेट पर मिट्टीकी पुलटिसका बाँधना उपयोगी हो सकता है, पर उससे भी विशेष लाभकारी जहाँ जहाँ गाँठें हों वहाँ वहाँ पर गरम पानीकी बोतलोंसे सैक करना है । बीमारके पैर आदिको राईके तैलसे मलना चाहिए। उसे खानेको न देना चाहिए। बीमार घबरा न जाय इसके लिए उसे हिम्मत बँधानी चाहिए । बीमारको एकदम दस्त लगे तो बार बार उसे पलँगसे न उठा कर पलँग पर ही एक बरतन रख कर उसमें पाखाने फिरा देना चाहिए। यदि तुरंत ऐसे उपायोंकी योजना कर दी जाय तो बीमारको तकलीफ पहुँचना बहुत ही कम सम्भव है। हैजेके समय भी उससे बचनेके कई अच्छे अच्छे उपाय हैं। हैजा बहुत

करके गरमीके दिनोंमें होता है। इन दिनोंमें हम बिना कुछे सोचे विचारे कच्चे-पक्के और सड़े फलोंको खाने लगते हैं। साधारण समयमें हमें फल खानेकी इतनी आदत नहीं होती। गरमीकी मोसममें एक तो अनेक प्रकारके फल होते हैं और दूसरे वे सस्ते होनेके कारण बहुत खानेमें आते हैं। इसके सिवाय भी हमें अपना नियमित भोजन करना ही पड़ता है। इससे एक दम इन फलोंका हम पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। हमारे शरीरमें पेट वगैरहकी कोई न कोई बीमारी बनी ही रहती है। इस कारण ऐसे फल वगैरहको शरीर नही मानता तब हैजा हो जाता है। उस समय बीमारके पाखानेकी कुछ फिकर नही की जाती। उसके जन्तु हवाको खराब करते हैं। गरमीकी मौसममें सूखा होनेसे पानी भी अच्छा नहीं रहता, वह गंदा होता है, उसमें जीव पड़ जाते है और हम लोग वही पानी बिना गरम किये और बिना छाने पी जाते हैं। ऐसी सूरतमें बीमारी क्यों न हो ! कुदरतने हमारे शरीरको मजबूत बनाया है, इससे हम टिक रहे हैं। अन्यथा हमारे आचरण तो ऐसे हैं कि हमारा निकाल बहुत ही जल्दी हो जाना चाहिए।

हैजेके समय नीचे लिखे अनुसार सावधानी रखनेकी आवश्यकता है। खुराक हलकी खानी चाहिए। अच्छा मेवा जरूर खाना चाहिए; परन्तु उसकी देख-भाल पहले ही अच्छी तरह कर लेना आवश्यक है। लोभ या स्वादके वश लगे हुए आम या दूसरे फल कभी न खाना चाहिए। साफ हवामें रहना चाहिए। पानी हमेशा गरम कर खादीके कपड़ेसे छाना हुआ पीना चाहिए। बीमारोंका पाखाना जमीनके भीतर गाड़ कर उस पर धूल पूर देनी चाहिए। पाखाना गये बाद उस पर हर समय राख डालनेका रिवाज जारी रक्खा जाय तो बहुत ही कम भय रह जाना सम्भव है। वास्तवमें देखा जाय तो इस नियमको सर्वदा पालन करनेकी आवश्यकता है। बिल्ली भी अपने पंजोंसे जमीनको

खोदकर पाखाना फिरती है और फिर उस पर पैरोंसे मिट्टी पूर देती है । पर हम छूआ-छूतकी घृणाके मारे ऐसा नहीं करते, और इसी कारण फिर हम इन बीमारियोंके पंजेमें फँस जाते है । राख न मिले तो सूखी मिट्टीका उपयोग करना चाहिए। मिट्टीके ढेले हों तो उन्हें फोड़ कर उनकी धूल बना लेनी चाहिए।

उड़ती हुई पेचिश सबसे कम भयंकर बीमारी है। इसमें यदि बीमारको खानेको न देकर उसके पेडू पर मिट्टीकी पुलटिस बराबर बाँधी जाय तो बीमारी बिल्कुल मिट जाती है । बीमारके पाखानेको ऊपर लिखे मुआफिक जमीनमें गाड़नेकी आवश्यकता है । पानीके विषयमें भी हैजेके समान सावधानी रखनेकी जरूरत है।

अखीरमें यह कहना है कि ऊपर बतलाई हुई छूतकी बीमारियोंमें बीमार, उसके मित्र और सम्बन्धियोंको हिम्मत हारनेकी कोई आवश्यकता नही है । डरनेसे बीमार घबरा कर जल्दी मर जायगा और उसके आस-पास रहनेवाले इष्ट मित्रों या सम्बन्धियोंको भी बीमारी हो जाना संभव है।

८ प्रसव (सौरी) ।

साधारण रोगोंके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके। इन प्रकरणोंके लिखनेका यह मतलब नहीं है कि दुनियाँके सारे रोगोंके विषयमें लिखा जाय; परन्तु असल अभिप्राय यह है कि प्रसिद्ध प्रसिद्ध रोगोंका विचार कर रोगमात्र और उनके उपचारकी एकता बतला दी जाय। जो रोगसे खूब घिरे हुए हैं और मौतसे डरते है उनके सामने तो कैसे भी ग्रन्थ क्यों न रक्खे जायँ वे तो वैद्य-हकीमोंके पास पहुँचेहीगे। ये प्रकरण ज्यादा-से-ज्यादा इतना ही बतला सकते है कि साधारण रोगी मनुष्य अच्छे होकर आरोग्य-रक्षाके नियमोंका पालन करें तो वे फिर बीमार होकर भयंकर रोगके पंजेमें न फँसेगे। इसके सिवा लिखनेका दूसरा यह भी कारण है कि बहुत थोड़े मनुष्योंमें ऐसा करनेकी हिम्मत होती है कि वे आरोग्य-रक्षाके नियमोंका बराबर पालन कर वैद्य-डाक्टरोंकी शरण न लें, ऐसे लोगोंके लिए भी ये छोटे छोटे प्रकरण उपयोगी हों। अब हम ऐसी दशामें पहुँचे हैं कि सौरी, बच्चोंकी सम्हाल, और अकस्मात् विपत्तिके ऊपर भी थोड़ा थोड़ा विचार करें।

सौरी (सुवावड-प्रसव-) के विषयको लोगोंने बातका बतंगड़ बना डाला है। नीरोग स्त्रीको प्रसवके समय भयंकर कष्ट नही होता। गाँवके लोगोंमें प्रसव एक मामूली बात समझी जाती है। गर्भवती स्त्रियाँ अखीरतक अपना काम करती रहती हैं और प्रसव होते समय कुछ कष्ट नही पाती। ऐसे भी उदाहरण देखे गये है कि गूजरोंकी स्त्रियाँ बच्चे हुए बाद तुरंत काममें लग जाती है। दूसरे प्राणियोंमें तो हम देखते हैं कि प्रसवसे वे तकलीफ नहीं पातें।

तब शहरकी औरतें क्यों तकलीफ भोगती है? प्रसव होते समय क्यों उन्हें असह्य वेदना होती है? प्रसव होनेसे पहले और बाद क्यों

उनकी खास तौर पर सेवा-शुश्रूषा करनी पड़ती है ? इन प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है ।

शहरकी औरतोंका रहन-सहन अस्वाभाविक है । उनकी खुराक, उनका पहनाव कुदरती नियमोंके विरूद्ध है । परन्तु इसके सिवाय एक बड़ा भारी कारण और भी है । वह यह कि कम उम्रकी लड़कियोंको गर्भवती होने पर भी पुरुष उनका संग करना नहीं छोड़ते और प्रसव हुए बाद भी–प्रसव शय्यासे उठते ही उनके साथ ऐसा व्यवहार करने लगते है कि उससे बेचारी स्त्रियाँ फिर गर्भ धारण कर लेती हैं । बतलाओ फिर ऐसी स्त्रियाँ ही दुःख न भोगे तो कौन भोगे ? ऐसी भयंकर और दया करने योग्य दशा लाखों लड़कियों और स्त्रियोंकी देख पड़ती है । ऐसी शहरकी जिन्दगीमें और नरकमें कुछ भेद नहीं है । जबतक मनुष्य ऐसे राक्षस रहेंगे तबतक स्त्रियोंको चैन नही हो सकता । बहुतसे पुरुष स्त्रियोंको दोष देते है । पर इन प्रकरणोंका उद्देश दोषोंकी तुलना करना नही है । दोष चाहे दोनों पक्षका हो, चाहे एक पक्षका, दोष है जरूर । अपने इन दोषोंको जाने बाद माता-पिता और बालक पति-पत्नीको सावधान होना चाहिए। जबतक बालपनेकी, और गर्भ रहे बाद तथा प्रसव हुए बादकी विषय-प्रवृत्ति न रुकेगी तबतक सुखी प्रसव हो ही नहीं सकता। प्रसवकी साधारण तकलीफोंको स्त्रियाँ इस विश्वासके कारण सह लेती हैं कि प्रसवमें तो वेदना होती ही है, महीने भर निर्बल रहना ही पड़ता है । पर उन्हें इस विषयका वास्तविक ज्ञान न होनेसे संतान दिन दिन निर्बल, अज्ञान और निस्तेज उत्पन्न होती जाती है । यह महा भयंकर परिणाम है । इसे रोकनेके लिए प्रत्येक मनुष्यको अखंड प्रयत्न करना चाहिए । यदि एक स्त्री और एक पुरुषने भी इस अनाचारको छोड़ दिया तो उतना ही जगत्‌को लाभ पहुँचेगा । इसमें किसीको किसीकी राह देखनेकी जरूरत नहीं है ।

इसका मतलब यह हुआ कि सबसे पहले पुरुषको गर्भवती स्त्रीके साथ संग करना छोड़ देना चाहिए । इसके बाद नौ मास पर्यन्त स्त्री पर बहुतसी जिम्मेवरीका बोझा पड़ जाता है; इस लिए यह बात समझने योग्य है कि बालकके चरित्रका बहुत कुछ आधार माताके इन नौ महीनेकी रहन-सहन पर है । माता प्रेमपूर्ण होगी तो बच्चा भी प्रेम करनेवाला होगा । माता क्रोधी होगी तो बच्चा भी क्रोधी होगा । कहनेका अभिप्राय यह है कि नौ महीनेतक माताकी आन्तरिक वृत्तियाँ बहुत ही अच्छी रहनी चाहिए । उसे सदा पवित्र कामोंमें लगे रहना चाहिए । दयालु और उदार-हृदय होना चाहिए । निर्भय और निश्चिन्त होना चाहिए । उसके हृदयमें पशुपना न आने देना चाहिए । उसे झूठ न बोलना चाहिए और न निकम्मी बातोंमें समय खोना चाहिए । जो स्त्री इन नियमोंका पालन करेगी उसका बच्चा तेजस्वी हुए बिना न रहेगा ।

जिस भाँति मानसिक शुद्धता रखनेकी आवश्यकता है उसी भाँति शारीरिक शुद्धि रखनेकी भी आवश्यकता है । सदा स्वच्छ वायु सेवनकी जरूरत है । गर्भवती स्त्रीको ज्यादा श्वास लेने पड़ते हैं, अत एव उसे विशेष उत्तम हवामें रहना चाहिए । उसे अन्न उतना ही खाना चाहिए जितना कि वह नियमित रूपसे पच जाय और साथ ही वह उत्तम हो । पहले प्रकरणोंमें बतलाई हुई उत्तम खुराक उसे खानी चाहिए । इस समय ओलिव-आइल और गेहूँके पदार्थ उसे उतने ही खाने चाहिए जितने वे पच जायँ । यदि कब्ज रहता हो तो दवाके लिए दौड़नेकी कोई जरूरत नहीं है । खुराकमें ओलिव-आइल बढ़ा देना चाहिए । जी मचलाता हो और उलटी होती हुई जान पड़े तो नीबूका रस–शक्कर डाले बिना ही–पानीमें मिलाकर पी लेना चाहिए । इन महीनोंमें मिरच-मसाला वैगरह सर्वथा छोड़ ही देना चाहिए ।

कितनी ही स्त्रियोंको इस समयमें खूब दोहद होते है। उन्हें दूर करनेका उत्तम इलाज यह है कि उन स्त्रियोंको 'क्यूनी-बाथ' लेना चाहिए। इस बाथके लेनेसे शरीकी शक्ति बढ़ेगी, कान्ति बढ़ेगी और प्रसवके समय उन्हें वेदना भी कम होगी। कई स्त्रियोंने स्वयं इसका अनुभव किया है। दोहदके समय मन पर भी कुछ अंकुश रखना चाहिए। जिस चीज पर चित्त ललचावे उसे एक-दो वार छोड़ देनेसे चित्त वश हो सकता है। माता-पिताको चाहिए कि वे सदा गर्भस्थ बच्चेकी रक्षाका विचार करते रहें।

पुरुषका कर्तव्य है कि वह ऐसे समय स्त्रीके साथ लड़ाई झगड़ा कर उसे घबराहटमें न डाले। वह ऐसे काम करता रहे कि स्त्री खुश रहें और सुख पावे। उस पर घरके कामका ज्यादा भार हो तो उसे हलका कर देना चाहिए। इसके लिए बडी सावधानी रखनी चाहिए कि गर्भवती स्त्रीके पेटमें कोई दवा न जाय। गर्भवती स्त्रीको थोड़ी देर खुली हवामें घूमना-फिरना भी आवश्यक है।

१ बच्चोंकी सम्हाल।

दाईके विषयोंको लिखनेका इस लेखका उद्देश नहीं है। हम यहाँ पर बालक पैदा हुए बादकी दशाके सम्बन्धमें कुछ विचार करेंगे। जिन्होंने पहलेके प्रकरण पढ़े है वे समझ सकेंगे कि प्रसवके समय प्रसूतिको बन्द हवा वाली अँधेरी कोठड़ीमें गन्दे बिछौने पर रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है और न इसी बातकी आवश्यकता है कि उसकी खाटके नीचे अँगीठियाँ रखकर उसे आगकी गरमीसे झुलस दी जाय। प्रसूतिको अँधेरेमें रखनेका रिवाज कितना ही पुराना क्यों न हो, पर वह घातकी है और हवा बंद करनेका रिवाज तो उससे भी ज्यादा घातकी है। नीचे जलती हुई अँगीठी रखनेकी रीति अनावश्यक ही नही, जोखम भरी भी है। सरदीकी मौसममें प्रसूतिके लिए विशेष गरमीकी आवश्यकता है, परन्तु इसके लिए उसे ज्यादा ओढ़ाना चाहिए। कोठेमें सरदी रहती हो तो वहाँकी हवाको गरम करनेके लिए अँगीठीको बाहर सुलगा कर जब धुआँ न रहे तब भीतर ले जाना चाहिए; परन्तु उसे प्रसूतिकी खाटके नीचे रखनेकी कोई जरूरत नही है। प्रसूतिके बिछौनेमें गरम पानीकी बोतलें रखनेसे भी गरमी आ सकती है। प्रसूतिको मैले-कुचैले और गंदे कपड़ोंमें सुलाना हत्यारापन और बहम भरा हुआ है। सौरीसे उठे बाद सब कपड़े धो-साफ कर उपयोगमें लाये जा सकते है।

बच्चेकी तबीयतका आधार माँकी तबीयत पर है। इस कारण ऊपर लिखी हुई सावधानी रखनेके सिवाय माताको ऐसी खुराक देनी चाहिए जो उसकी प्रकृतिके अनुकूल पड़े। गोंद वगैरह खानेसे कुछ फायदा नहीं जान पड़ता। यदि प्रसूतिको केले वगैरह मेवेके साथ ओलिव-आइल मिलाकर गेहूँकी खुराक खिलाई जाय तो उससे उसके शरीरमें गरमी रहेगी और दूध बहुत अच्छा उतरेगा। ओलिव-आइलके कारण

दूध रेचक रहेगा और इससे बच्चेको साफ दस्त आयगा। बच्चेको कुछ भी कष्ट जान पड़े तो माताकी प्रकृति देखनी चाहिए। बच्चेको दवा देना उसे खो बैठनेके बराबर है। बच्चोंका कोठा बड़ा ही नाजुक होता है, इस कारण उन्हें दवा वगैरका जहर फौरन् चढ़ जाता है। इस समय माताको ही दवा देना चाहिए; क्योंकि दवाके सूक्ष्म गुण दूधमें आ जाते हैं। प्रायः देखा जाता है कि बच्चेको खाँसी हो जाती है या दस्त बन्द हो जाते हैं। इस सूरतमें घबड़ा कर इधर उधर दौड़-धूप करनेकी कोई जरूरत नहीं है। एक-दो दिन देखकर उसका कारण जानना चाहिए और फिर उसे दूर करनेका यत्न करना चाहिए। ऐसा करनेसे रोग अपने आप दूर हो जायगा। व्यर्थकी दौड़ा-दौड़ करनेसे बच्चेकी तबीयत और भी अधिक बिगड़नेकी संभावना है।

बच्चेको हमेशा गुनगुने पानीसे नहलाते रहना चाहिए। उसे कम कपड़े पहनाने चाहिए। कुछ महीनों तक यदि कपड़े बिल्कुल ही न पहनाये जायँ तो और भी अच्छा है। एक छोटीसी नरम सफेद चद्दरमें बच्चेको लपेट कर ऊपरसे उसे गरम कपड़ा ओढ़ा देना सबसे अच्छा है। ऐसा करनेसे बच्चेको हमेशा कपड़े पहनानेकी दिक्कत दूर हो जायगी, कपड़े कम खराब होंगे और बच्चेके शरीरका गठन नाजुक न होकर मजबूत होगा। बच्चेकी नाल पर बारीक कपड़ेको चौहरा कर रखना चाहिए और उस पर पट्टा बाँध देना चाहिए। नाल पर डोरी बाँधनेका जो रिवाज है वह बहुत खराब है। पट्टेको सदा खोलते रहना चाहिए। नालके आस-पासका भाग यदि गीला देख पड़े तो उस पर स्वच्छ चावलोंका छना हुआ बहुत ही बारीक आटा रूईसे लगाना चाहिए। इससे उसका गीलापन मिट जायगा।

जबतक माताके स्तनोंमें खूब दूध आता हो तबतक बच्चेको दूसरी खुराक देनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। जब दूध कम होने लगे तब गेहूँको सैक कर उन्हें पीस लेना चाहिए। इस आटेमें गर्म पानी डाल कर

और थोड़ासा गुड़ मिलाकर पिलानेसे यह दूधके ऐसा ही गुणकारी होगा। इसके बजाय आधे केलेको ओलिव-आइलमें खूब मिला कर बच्चेको खिलाया जाय तो और भी विशेष लाभ होगा। यदि गायका दूध पिलाना हो तो पहली वार तीन भाग दूधमें एक भाग पानी मिलाकर उसे गरम कर लेना चाहिए और जब उसमें एक उफान आ जाय तब पिलाना चाहिए। इसमें थोड़ासा साफ गुड़ मिला देना चाहिए। गुड़की जगह शक्कर डालनेसे नुकसान होता है। बच्चेको धीरे धीरे हरा मेवा ज्यादा-ज्यादा खिलानेकी तजबीज करनेसे उसका रक्त जन्मसे ही सुधरता जायगा और बालक तेजस्वी और बलवान् होगा। बच्चोंके दाँत निकलते ही या इससे भी पहले कई मातायें उन्हें दाल-भात शाक आदि देने लगती है, पर ऐसा करना बहुत ही खराब है। बच्चोंको चाय-काफी कभी न पिलानी चाहिए।

बच्चा जब बड़ा होकर चलने-फिरने लगे तब उसे कपड़े पहनाने चाहिए। जूतेकी उस समय भी उसके लिए कोई जरूरत नहीं है। बच्चोंको काँटोंमें फिरना नहीं पड़ता। इस कारण बिना जूतेके चलने-फिरनेसे उनके पैर मजबूत होंगे। बचपनसे जूते पहनानेसे खूनकी गति बड़ी कठिनाईसे होती है, नंगे पैर रहनेसे उसमें फिर यह बाधा न आयगी। बच्चोंको शोभाके लिए रेशमी या जरीके कपड़े—लहँगा, टोपी तथा हार, कड़े आदि जेवर पहनाना निरा जंगलीपन और घातकी रिवाज है। हमारा यह मानना केवल अज्ञान और मिथ्याभिमान है कि ऐसा करके हम स्वाभाविक सुन्दरताको बढ़ा रहे है।

बच्चेकी शिक्षा जन्मसे ही प्रारंभ हो जाती है यह बात हमें भूल न जान चाहिए। बच्चेके सच्चे शिक्षक उसके माता-पिता ही है। बच्चोंको धमकाना, उनके शरीर पर बोझा लादना, और उन्हें ठूँस ठूँसकर खिलाना शिक्षाके नियमका भंग करना है। यदि बालकके माता-पिता चिड़चिड़े स्वभाव या नाजुक मिजाजके हों तो बालक भी उन्हींके जैसा बनेगा; बात-चीतका ढंग

भी उसमें माता-पिताके सदृश आवेगा । यदि वे तुतला कर बोलते होंगे तो वह भी तुतला कर बोलेगा; उनके मुखसे गालियाँ निकलती होंगी तो बच्चा भी गालियाँ देना सीखेगा, माता-पिता अनीति करते होंगे तो बच्चा भी अवश्य अनीतिका अनुसरण करेगा, और माँ-बाप जैसा खाते पीते होंगे बच्चा भी वैसा ही खाना-पीना सीखेगा । इस भाँति जो शिक्षा बालक घरमें सीखता है वह पीछे कहीं नहीं सीख पाता । कहावत प्रसिद्ध है 'बाप जैसे बेटे'। यहाँ पर बापका अर्थ माँ-बापसे है ।

इस प्रकार विचार करनेसे जान पड़ता है कि माता-पिताका कर्तव्य कितना नाजुक है । मनुष्य-जातिका प्रथम कर्तव्य यह है कि वह अपने बच्चोंको सच्चरित्र बनावे और उन्हें ऐसी शिक्षा दे कि वे स्वयं शोभा-सम्पन्न होकर अपने बड़ोंकी भी शोभा बढ़ावें । फल और वृक्षोंके सम्बन्धमे हम देखते हैं कि केलेके वृक्ष पर केले ही फलते है और अच्छे वृक्ष पर उत्तम फल ही आते है । उसी भाँति अच्छे जानवरके अच्छे ही बच्चे होते हैं । मनुष्य इस नियमका भंग करते है; और इसी कारण पवित्र माँ-बापके बच्चे अपवित्र होते हैं । स्वस्थ माँ-बापोंकी सन्तान अस्वस्थ देख पड़ती है । इसका मुख्य कारण--या एक मात्र कारण--यही है कि हम माँ-बापकी पदवीके योग्य न होनेकी दशामें भी प्रायः अपनी स्वच्छन्दतासे माँ-बाप बन जाते है । फिर बच्चोंके स्वार्थकी सम्हाल किसे रह सकती है ? परन्तु नीतिशाली माता-पिताओंका तो यह कर्तव्य है कि वे अपने बच्चोंका अच्छी तरह पालन-पोषण करें । इसके लिए माता और पिता दोनोंको सुशिक्षित होना चाहिए । जो माता-पिता ऐसी शिक्षा पाये हुए नहीं हों और यदि वे अपनी भूलको समझलें तो उन्हें चाहिए कि वे अपने बच्चोंको दूसरे सुशिक्षित नीतिमान् मनुष्योंकी संरक्षतामें रख दें । यह आशा करना व्यर्थ है कि पाठशालाओंमें जाकर बच्चे सच्चरित्र होंगे । सच्चरित्रता सीखनेका एक ही मार्ग है और वह यह कि

बच्चोंको सदा अच्छे संयोगोंमें रक्खा जाय। घर और पाठशालामें जुदी जुदी प्रकारकी शिक्षा मिलनेसे बच्चे कभी नहीं सुधर सकते। इन विचारोंके अनुसार शिक्षा देनेका कोई समय मुकर्रर नहीं है। बच्चा जबसे जन्म लेता है तभीसे उसकी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक या धार्मिक शिक्षा शुरू हो जाती है। शब्दज्ञान वह जबसे तुतला कर बोलने लगता है तबसे शुरू होता है। और अक्षरोंका ज्ञान वह माता-पिताके पास खेल ही खेलमें प्राप्त कर लेता है। प्राचीन समयमें ऐसा ही होता था। पाठशालाओंमें पढ़ानेका रिवाज तो यह अब चला है। माता-पिताका बच्चोंके प्रति जो कर्त्तव्य है उसका यदि वे बराबर पालन करें तो यह नहीं कहा जा सकता कि उनके बालक कितने ज्यादा उन्नत हो सकते है—उनकी उन्नतिकी हद कायम नहीं की जा सकती। परन्तु खेद है कि हम बच्चोंको अपने खिलौने समझते है। हम उनका झूठा लाड़-प्यार कर—उन्हें सुन्दर कपड़े-लत्ते आदि पहना कर बचपनसे ही बिगाड़ देते हैं। और फिर हमारे झूठे लाड-प्यारमें आकर वे जो कुछ करते है हम उन्हें बे-रोक टोकके करने देते हैं। हम स्वयं कंजूसी कर उन्हें कंजूस बनाते है। विषय-लोलुप बन कर उनके सामने विषयीपनका उदाहरण रखते है। आलस्यमें अपना समय खोकर उन्हें आलसी बनाते है। गंदे रहकर उन्हें गंदा रहना सिखाते है। झूठ बोलकर उन्हें झूठ बोलना बतलाते हैं। जब हमारी यह हालत है तब फिर हमारी सन्तान निर्बल, दुराचारी झूठी, विषयी, स्वार्थी, आलसी, लालची आदि हो तो आश्चर्य क्या है? इन वचनों पर समझदार माता-पिताको बहुत विचार करना आवश्यक हैं। हिंदुस्तानका आधा भविष्य तो उन माता-पिताओं पर ही निर्भर है।

१० अकस्मात्-डूबना।

कितने ही रोगोंके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके। अब अकस्मात् आई हुई विपत्तिके सम्बन्धमें कुछ विचार करना आवश्यक जान पड़ता है। इस विषयका साधारण ज्ञान सबको होना चाहिए।कि यदि किसी मनुष्यका प्राण किसी आकस्मिक-विपत्तिसे जा रहा हो तो उस समय उसे सहायता पहुँचाई जा सके; और इस प्रकारकी शिक्षा बाल-बच्चोंको बचपनसे ही दी जानी चाहिए, जिससे उनमें दयालुता बढ़ती रहे।

पहले हम डूबे हुए मनुष्यकी सेवा-शुश्रूषाका विचार करते है। इंग्लेंडमें एक परोपकारिणी सभा है। उसका काम अकस्मात् विपत्तिके समय सहायता पहुँचानेका है। इस विषयमें उसने कितनी ही बहुमूल्य सूचनायें प्रगट की हैं। उनमेंसे प्रधान प्रधान बातें कुछ परिवर्तनके साथ घटा-बढ़ा कर नीचे लिखी जाती है।

कहा जाता है कि श्वास रुके बाद पाँच मिनटसे ज्यादा मनुष्य कदाचित् ही जीता रहता है। इस कारण डूबे हुए मनुष्यको पानीसे निकाले बाद उसमें बहुत ही कम अंशमें जीवन रहता है। उसमें जीवन बनाये रखनेके लिए बहुत शीघ्र उपाय किये जाने चाहिए। उन उपायोंमें प्रधानतया दो बातों पर ध्यान देना चाहिए। एक तो कृत्रिम रीतिसे उसके श्वासोच्छ्वास जारी कर दिये जायँ और दूसरे उसे गरमी पहुँचाई जाय। उपचारका विचार करते समय हमें यह बात भूल न जानी चाहिए कि उस समय बीमारका जो हम तुरंत उपचार करना चाहते हैं वह नदी तालाब आदि ऐसे स्थानों पर करना पड़ता है जहाँ पर सब साधन नहीं मिलते। डूबे हुए मनुष्यके पास उस समय दो-तीन मनुष्य हों तो ठीक तौर पर सेवा-शुश्रूषा हो सकती है। सहायता करनेवाले मनुष्योंमें समय-सूचकता, धैर्य और फुर्ती होनी चाहिए। उस समय

यदि वे स्वयं घबरा उठेंगे तो उनसे कुछ न हो सकेगा। सिवाय इसके यदि वे लोग अपनी अपनी इच्छाके अनुसार काम करनेकी सलाह देने लगेंगे तो भी बीमारको न बचा सकेंगे। उस समय तो उन सबमें जो होशियार हो उसीके कहनेके अनुकूल सबको काममें लग जाना चाहिए।

बीमारको बाहर निकाले बाद तुरंत ही उसके गीले कपड़े निकाल कर अपने पास जो कुछ कपड़ा हो उससे उसका शरीर पोंछ डालना चाहिए। इसके बाद उसके ललाट पर हाथ रखकर एक मिनिट भरके लिए उसे औंधा सुला देना चाहिए और उसकी छाती पर हाथ रखकर मुँहकी ओरसे पानी, कचरा वगैरह निकाल डालना चाहिए। इस तरह पानी निकालते समय उसकी जबान बाहर निकल आवेगी, उसे रूमाल वगैरह किसी कपडेसे पकड़ रखनी चाहिए। और इस तरह जबतक उसे चेत न हो जाय तबतक जबान पकड़े रहना उचित है।

इसके बाद उसे चित सुलाकर उसके सिर और छातीका भाग पैरोंकी अपेक्षा कुछ ऊँचा रखना चाहिए। फिर एक आदमीको घुटने टेककर बीमारके सिरकी ओर बैठ उसके हाथोंको धीरे धीरे उठाकर लम्बे और सीधे करने चाहिए। ऐसा करनेसे उसकी पसलियाँ ऊँची होगी और बाहरकी हवा उसके शरीरके भीतर प्रवेश कर सकेगी। इसके बाद ही उसके हाथोंको टेढ़े कर उन्हें उसकी छाती पर दबाने चाहिए। ऐसा करनेसे बीमारकी पसलियाँ दबकर उसके शरीरसे श्वास निकलने लगेगा। इसके सिवाय गरम और ठंडा पानी चुल्लूमें भर भर कर बीमारकी छाती पर छींटते रहना चाहिए। यदि उस समय आग सुलगाई जा सके या कहीं आसपाससे लाई जा सके तो लाकर उससे सैक कर बीमारको गरमी पहुँचानी चाहिए। उस समय हमारे पास जितने कपड़े हों उन्हें बीमारको ओढ़ाकर उसका शरीर खूब मलना चाहिए, जिससे उसे गरमी आजाय। इन सब उपायोंको बहुत देरतक करते रहनेकी आवश्यकता है। हमें

एकदम बीमारकी ओरसे आशा छोड़ बैठना उचित नहीं है । डाक्टर वेहिंगने लिखा है कि इन उपायोंके करते रहने पर कभी कभी पाँच पाँच घंटे बाद बीमारको श्वास आते देखा गया है । इस कारण उत्साह पूर्वक बड़ी शीघ्रताके साथ उपर्युक्त उपचारोंके करते रहनेकी जरूरत है । यदि बीमारमें कुछ चेतना आई जान पड़े तो उसी समय उसे कुछ गरम चीज पिलानी चाहिए । गरम पानीके साथ नारंगीका रस या तज, लौंग और मिरचका काढ़ा बनाकर, पिलानेसे उसमें अधिक चेतना आ सकेगी । अथवा तम्बाकू सुँघानेसे भी लाभ पहुँचना संभव है । बीमारको उस समय घेरे रहकर निकम्मे खड़े रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है । उसे खुली हवा लगने देनी चाहिए । उसे खुली हवा जितनी ही अधिक लगेगी उतना ही अधिक लाभ होना संभव है ।

ऐसे बीमारके मरजानेके साधारण चिह्न ये है–उसका श्वास बन्द हो जाय, छाती पर हाथ या नली रखनेसे उसमें कुछ धबकारा न जान पड़े, नाड़ियाँ बंद हो जायँ, आँखें अध खुली रह जायँ, जबड़े भिड़ जायँ, उँगलियाँ मुड़ जायँ, जबान दाँतोंके बीच दब जाय, नाक पर ललाई छा जाय और सारा शरीर फीका पड़ जाय । इसके सिवाय उसके नाकके पास मोरका पीख रखनेसे वह हले-चले नहीं, और काच रखनेसे उस पर श्वासकी भाफ न जमे । ये सब चिह्न एक साथ दीख पड़ें तो समझना चाहिए कि रोगी मर गया । परन्तु डाक्टर मूरका कहना है कि इन सब चिह्नोंके मौजूद रहते भी, कई वार देखा गया कि उसमेंसे जीव नहीं निकला है । उनका कहना है कि मरजानेका सच्चा चिह्न शरीरका सड़ने लगना है । इतना जाने बाद हम यह सहज ही समझ सकते है कि बीमारकी बहुत समयतक सेवा किये बाद भी जब उसके जीनेके कुछ आसार न देख पड़े तब हमें उसकी आशा छोड़नी चाहिए; पहले नहीं ।

११ अकस्मात्-जलना।

किसी भी मनुष्यके कपड़े आदि जल उठते हैं तो हम घबरा जाते है। यह बात जले पर जलानेके सदृश है। जले हुए मनुष्यकी सहायता करनेकी जगह उलटा हम उसे महा कष्टमें डाल देते हैं। इस लिए जलजाने पर क्या उपचार करने चाहिए, इस बातको जान लेना हमारा कर्त्तव्य है।

जिसके कपड़े सुलग उठे हों उसे एकदम घबरा न जाना चाहिए। यदि सिर्फ कपड़ेका एक ही छोर सुलगा हो तो तुरंत उसे हाथोंसे शीघ्रताके साथ मसल डालना चाहिए। यदि सारा भाग जल उठा हो तो उसी समय धूलमें लौटने लग जाना चाहिए। शतरंजीके समान कोई मोटा कपड़ा मिल जाय तो फौरन् उसे शरीर पर लपेट लेना चाहिए। और यदि पानी मिल जाय तो उसे शरीर पर डाल लेना चाहिए। आगके बुझते ही फौरन देखना चाहिए कि कहीं जला तो नहीं है। यादि जला हो तो वहाँ पर कपड़ेका चिपक जाना सम्भव है। उस कपड़ेको उखाड़ना ठीक नहीं है। जहाँ पर कपड़ा चिपका हो उसे वहीं रहने देकर बाकीका हिस्सा कैंचीसे काट डालना चाहिए। उस समय इस बातकी खूब सम्हाल रखनी चाहिए कि चमड़ी न उखड़ने पावे। इसके बाद तुरंत साफ मिट्टीकी पुलटिस जले हुए सब स्थानों पर बाँध कर ऊपरसे पट्टा बाँध देना चाहिए। इससे जलन बिल्कुल मिट कर बीमार बहुत कम तकलीफ भोगेगा। यदि कपड़ा चिपक रहा हो तो उस पर भी पुलटिसका पट्टा बाँधनेमें कुछ हानि नहीं है। उस पट्टेको सूखते ही उसे फिर पलट देना चाहिए। उस समय ठंडे पानीसे डरनेका जरा भी भय नहीं है।

समय पर जिसे यह उपाय न सूझ पड़े उसके लिए नीचे कुछ अन्य उपचार लिखे जाते हैं। ये उपचार अंग्रेजीकी पुस्तकके आधारसे लिखे गये

हैं। केलके हरे पत्ते पर ओलिव-आइल या मीठा तैल चुपड़ कर उसे जली हुई जगह पर बाँधना चाहिए। पत्ता यदि न मिल सके तो बारीक कपड़ेको तैलमें भिगोकर बाँध देना चाहिए। इसके सिवाय अलसीके तैल और चूनेको पानीके बराबर लेकर अच्छी तरह मिलाकर उपयोगमें लाया जाय तो भी फायदा होगा।

चिपका हुआ कपड़ा यदि न निकल सके तो गुनगुने दूध और पानी-से उसे भिगोना चाहिए। और जब वह खूब भीग जाय तब उसे धीरे धीरे निकाल डालना चाहिए। पहली बार बाँधे हुए तैलके पट्टेको दो दिनमें खोलना चाहिए। इसके बाद हमेशा नये पट्टे बदलते रहना चाहिए। जले हुए स्थानों पर यदि फौले पड़ गये हों तो उन्हें फोड़ डालना चाहिए; परन्तु चमड़ीको निकाल डालनेकी कोई जरूरत नहीं है।

जलनेसे यदि केवल चमड़ी ही सुर्ख हुई हो तो उस पर मिट्टीके पट्टे बाँधनेके समान एक भी उत्तम इलाज नहीं है। उससे तुरंत जलन बन्द हो जाती है।

उँगुलियाँ जली हों तो उन पर साफ पट्टा बाँध कर इस बातके ध्यान रखनेकी आवश्यकता है कि वे परस्पर छू न सकें। कितनी ही बार ऊपर तेजाबके गिर जानेसे लोग जल जाते है, उस समय भी ऊपर बतलाये हुए उपाय बड़ा काम दे सकते हैं।

१२ अकस्मात्-सर्पका काटना ।

मनुष्य सदासे साँपसे डरता आया है । सर्प-सम्बन्धी भ्रमोंका भी ठिकाना नहीं है । साँपका नाम लेने मात्रसे हम डरते है । हिन्दुओंमें साँपकी पूजा होती है । नागपंचमीका दिन खास तौर पर सर्प-पूजाका दिन है । यह एक स्थूल मान्यता चली आती है कि शेषनाग पर सारी पृथ्वीका भार है । भगवान स्वयं शेषशाई अर्थात् शेषनाग पर सोनेवाले है । शिवजीके गलेमें सापोंके हारकी कल्पना की गई है । अमुक विषयका हजार मुखके शेष-नागसे भी वर्णन नही हो सकता, कह कर साँपमें बुद्धि और ज्ञान माने गये है । इसी तरहके कुछ विचार क्रिश्चियनधर्ममें भी है । अँगरेजी भाषामें एक तुलना की गई है, उसमें दिखलाया है कि साँपकी बुद्धिके समान हमारी बुद्धि होनी चाहिए । करकोटक नागने नलको काटकर उसका बड़ा उपकार किया था । उसने उस पर जहरका प्रभाव डालकर उसे कुरूप बना दिया था, जिससे कि जंगलमें फिरते हुए उस पर किसीकी कु-दृष्टि न पड़े । बाईबिलमें साँपको शैतानका रूप भी दिया गया है । साँपने हवा बीबीको ललचाया था ।

इस तरह साँपके विषयमें अनेक तरहकी मान्यता और दन्त-कथायें प्रचलित हैं । साँपके डरके सम्बन्धमें तो हम कुछ सोच-समझ भी सकते हैं; परन्तु यदि साँपका जहर शरीरमें ठीक तरह प्रवेश कर जाय तो फिर हमारी मृत्यु ही होती है; और मृत्युको हम चाहते नहीं, इसी वास्ते साँपसे डरते है । यह बात भी समझ पड़ती है कि भयके कारण भी साँपकी पूजा होती है । यदि साँप बहुत ही छोटा जन्तु होता तो इतना भयंकर होने पर भी कदाचित् ऐसा न पूजा जाता; परन्तु, वह बड़ा विशाल, खूबसूरत और विचित्र प्रकारका प्राणी है, इसी कारण उसकी पूजा होती है ।

सर्पमें बुद्धिका आरोप क्यों किया गया इस बातके जाननेमें विशेष विचार करना पड़ता है । वर्तमान समयके शास्त्री (विद्वान्) कहते है कि सर्पमें बुद्धि है ही नहीं । उनकी शिक्षाके अनुसार जहाँ सर्प देख

पड़ें वहीं उन्हें मार डालना चाहिए। हिन्दुस्तानमें सर्प-दंशसे प्रतिवर्ष २०,००० मनुष्योंके मरनेकी सरकारने गणना की है। सम्भव है कि मृत्यु-संख्या इससे भी ज्यादा हो। प्रत्येक जहरीले साँपके मारनेवालेको सरकार कुछ इनाम भी देती है। तब यह बात देखनी चाहिए कि इससे हिन्दुस्तानको कुछ लाभ हुआ है क्या? यह तो एक साधारण अनुभवकी बात है कि साँप एकाएक किसीको नहीं काटता, उसे जब छेड़ते हैं तभी वह काटता है। क्या यह बात उसके ज्ञानको नहीं सूचित करती? कदाचित् ज्ञान उसमें न भी हो तो उसके निर्दोषपनको तो बतलाती है? सर्प दाँतोंको अपने बचावके लिए काममें लाता है,और ऐसा मनुष्य भी करते हैं, फिर वही अपराधी क्यों? इस कारण हिन्दुस्तान या किसी अन्य देशको सर्परहित करनेका प्रयास करना हवाके साथ आलिङ्गन करनेके समान है। किसी खास हिस्सेमें साँपोंका आना रोका जा सकता है। उधर आते हुए साँपोंको मार डालनेसे दूसरे साँप आते हुए रुक जायँगे। वे समझ लेंगे कि उधर जाना मौतके पंजेमें फँसना है। परन्तु ऐसा बहुत कम हिस्सेके लिए किया जा सकता है। हिन्दुस्तानके ऐसे विशाल देशके लिए तो यह साहस कभी सफल नहीं हो सकता—अर्थात् साँपोंको मारकर उन्हें जड़-मूलसे उखाड़ फैकनेका प्रयास पानीमें पैसे फैंक देनेके समान है।

साँपोंको भी परमेश्वरने ही पैदा किये है। ईश्वरके सारे कामोंको समझनेकी हममें शक्ति नही है। उसने साँप, सिंह, चीते, बिच्छू आदिको इस इच्छासे तो नहीं बनाये कि हम उन्हें मारें। यादि साँप अपनी सभा करके विचार करें कि मनुष्य हमें जहाँ पाते है वहीं मार डालते हैं, अतएव ईश्वरने साँपोंको केवल मनुष्यके मारनेके लिए बनाया है, तो क्या यह विचार ठीक समझा जायगा? नही। इसी तरह सर्पके सम्बन्धमें हमारा विचार भी गलत समझा जाना चाहिए।

सैंट फ्रांसिस नामक एक महायोगी योरपमें हो गया है। वह जंगलमें सर्पादि जीव-जन्तुओंमें फिरता रहता था तो भी उसे वे तकलीफ नहीं पहुँचाते थे; इतना ही नहीं, उसके साथ वे मैत्री रखते थे। हिन्दुस्तानके जंगलोंमें हजारों योगी-महात्मा रहते हैं। वे; साँप, तें दुए, सिंह आदिमें

निर्भयताके साथ फिरते हैं और उन्हें कभी उनके द्वारा कष्ट हुआ नहीं सुना। कोई कहेगा कि सर्पके काटने या फाड़ खानेवाले जीवोंसे उनका भी क्षय तो होता ही होगा, और यह बात सम्भव भी है। परन्तु यह तो समझमें आ सकता है कि सर्पादि जन्तु इतने ज्यादा है और साधु-योगी इतने कम हैं कि यदि हिंस्र जन्तु उनके पीछे ही पड़ जाते हों तो उनसे एक भी साधु-योगी न बचने पावे। और इस बातको हम जानते तथा मानते भी हैं कि साधु-महात्मा इन जानवरोंका मुकाबला करनेका अपने पास कोई साधन नहीं रखते। इससे यह सिद्ध होता है कि कितने ही भयंकर प्राणी भी कितने ही योगी-महात्माओंके साथ मित्रता रखते है या उन्हें सताना नहीं चाहते—उन्हें निर्भय जाने देते है। मैं तो इस बातका माननेवाला हूँ कि यदि हम प्रत्येक जीव पर वैर-भाव न रक्खें तो वे भी हम पर वैर-भाव न रक्खेंगे। दया और प्रेम मनुष्यका महान् गुण है। इस गुणके बिना कोई ईश्वरकी भक्ति नहीं कर सकता। हमें सारे मतोंमें थोड़ी-बहुत इस बातकी झलक देख पडती है कि दया धर्मका मूल है।

और एक बात है। सर्पादिकी उत्पत्ति और उनका क्रूर स्वभाव यह हमारे स्वभावकी ही प्रतिध्वनि क्यों नहीं हो सकती? मनुष्योंमें क्या कम घातकीपना है? हमारी जीभमें सदा सर्प-दंश भरा रहता है। हम तेंदुए और सिंहकी तरह अपने भाइयोंको ही फाड़ खाते है। हमारी धर्म-पुस्तकोंमें लिखा है कि मनुष्य जब निर्दोष हो जायगा तब सिंह और बकरी भी मित्रता करने लगेंगे। हमारे शरीरमें जबतक भेड़ और भेड़ियेकी लड़ाई चला करेगी तब तक जगत्-शरीरमें वैसी लड़ाई होती ही रहेगी। हम जगत्के दर्पण स्वरूप है। जगत्के सारे भाव हमारे शरीर-जगत्में प्रतिम्बित हैं। यदि हम इन्हें पलटें तो जगत्के भाव पलटे जा सकते हैं। जो मनुष्य अपने भावोंको पलटता है उसके सम्बन्धमें जगत् पलटता जाता है। यह ईश्वरकी महा लीला है—खूबी है और इसी खूबीमें हमारे सुखका आधार है। हमें औरोंकी राह न देखकर अपने भावोंको ठीक करना चाहिए।

सर्प-दंशके विषयमें इस तरह बढ़ाकर लिखनेका मतलब यह है कि सर्प-दंशके स्थूल उपाय बतलानेकी अपेक्षा जरा गहराईमें उतर कर ऐसे

चमत्कारी उपाय बतलाये जायँ जो हमें सारे भयोंसे बचानेवाले हों। इस कारण उपर्युक्त इलाजको एक भी मनुष्य यदि ग्रहण करनेका यत्न करे तो यह लेख व्यर्थ न होगा। और भी एक बात है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि आरोग्यके प्रकरण लिखनेका मतलब केवल शरीरके आरोग्यसे ही नहीं है, सब प्रकारके आरोग्यसे है।

वर्तमान समयके खोज करनेवाले भी इतना तो कहते है कि " जिसका शरीर आरोग्यपूर्ण है, जिसका खून जोशमें उबल नहीं उठा और जिसकी खुराक सात्विक है, उस मनुष्यको एकाएक साँपका जहर नहीं चढ़ता। इसके विपरीत जिसका रक्त, शराब वगैरहके पीने या गरमी उत्पन्न करनेवाली खूब मसालेकी बनी हुई खुराकके खाने–से तप रहा हो, उसके शरीरमें साँपका जहर तुरंत फैल जाता है और वह फौरन् मर जाता है। एक लेखकने तो यहाँ तक लिखा है कि जो मनुष्य नमक वगैरह छोड़ देता है और केवल फलादि पर निर्वाह करता है उसका रक्त ऐसा स्वच्छ हो जाता है कि किसी भी प्रकारके जहरका वह मुकाबला कर सकता है। यह बात कहाँ तक सही है सो अनुभवपूर्वक नहीं कहा जा सकता; और जिसने एक दो वर्षसे नमक वगैरह छोड़े हों उसे मान लेना चाहिए कि बहुत समयके दुरुपयोगसे जो रक्त बिगड़ा है वह एक–दो वर्षमें शुद्ध नहीं हो सकता।

प्रयोगोंसे यह भी देखा गया है कि जो मनुष्य डरा करता था या गुस्सेसे तप्त रहता था उस पर जहरका असर उसी दम हुआ है। गुस्से और भयके समय नाड़ी जल्दी-जल्दी चलती है और हृदयमें धड़के भी धड़ाधड़ होते हैं। इस बातको प्रत्येक जन अनुभवसे जान सकते हैं। जब जब रक्त बड़े जोरसे फिरने लगता है तब तब वह गरम हो जाता है। क्रोधादिसे उत्पन्न हुई गरमी वास्तविक गरमी नहीं हैं। इससे वह नुकसान करती है। क्रोध एक प्रकारका बुखार है। इसमें कुछ शक नहीं है कि ऐसी स्थितिमें जहर शीघ्र असर कर जाता है। इससे हम समझ सकते हैं कि सर्पादिके जहरसे बचनेका अच्छे-से-अच्छा इलाज तो यह है कि हम सात्विक–कुदरती खुराक खावें, गुस्सा न करें,

डरें नहीं, साँप काट खाय तो भी 'हाय मर गये' ऐसा विश्वास कर इलाज करनेके पहले ही न मर मिटें, अपनी स्वच्छ जिन्दगीके अकसीर असर पर भरोसा रक्खें और अन्तमें इस बातको सोचकर धैर्य रक्खें कि ईश्वरने जितनी जिन्दगी दी है उतनी तो भोगेंहीगे।

सर्प-दंशसे होनेवाली मौतोंमें बहुतसी मौतें तो अयोग्य इलाज और भयसे होती हैं। यह बात पोर्ट-इलिझाबेथके संग्रहालयके उच्चाधिकारी मि० फीट्झसीमनने सिद्ध कर दी है। उन्होंने बहुत वर्षोंसे साँपोंके सम्बन्धमें अभ्यास किया है और साँपके जहरके सम्बन्धमें प्रयोग भी किये हैं। अलग-अलग साँपोंकी जानकारी बतला कर उनके इलाज भी बताये है। उनका कहना है कि बहुतसे आदमी भयके कारण जोखममें पड़ते हुए अनुभव किये गये है और कई घातकी इलाजसे मरे है।

सब साँप जहरी नहीं होते और जहरी साँपोंमें भी सबके जहरसे तुरंत मौत नही होती। एक बात और भी है कि महा विषधर साँपको भी सदा ऐसे मौके नही मिलते कि वह सारी जहरकी थैलीको हमारे खूनमें उलट दे। ऐसा समझ कर किसी भी मनुष्यको—जिसे साँप काट खाय—सहसा भयभीत न होना चाहिए। आजकल ऐसे इलाज काममें लाये जाने लगे हैं जिन्हें वह स्वयं कर सकता है, और वे ये हैः—

जहाँ पर साँपने काटा हो, उस जगहसे ऊपरकी ओर, बड़े जोरसे एक रूमाल बाँध कर उसमें मजबूत पैसिल या लकड़ीके टुकड़ेसे बल दे देना चाहिए। बाँधनेका अभिप्राय यह है कि नसोंके जरिये जहर आगे न बढ़े। इतना किये बाद एक बारीक नोकके चाकूसे जहाँ सर्पका दंश लगा हो उस जगह आध इंच गहरा छेदकर उस जगहका खून निकाल देना चाहिए। फिर उसमें 'परमेंगनेट आफ पोटस' नामक क्षारकी लाल-काली बुकनी भर देनी चाहिए। यह बुकनी बहुत बढ़िया और अव्यर्थ इलाज है। ऐसी नलियाँ एक शीलिंग—बारह आनेमें बाजारमें बिका करती हैं, जिनमें एक ओर तो बलवाला अनीदार छोटासा चाकू होता है और दूसरी ओर यह बुकनी रक्खी जा सकती है। इस इलाजका साधन उस समय पास न हो तो बीमारका घाव किसी दूसरे मनुष्यको, या, स्वयं बीमारको चूसना चाहिए।

चूसे हुए खूनको थूँकते जाना चाहिए। जिसके मुँहमें क्षत पड़ रहे हों उससे चूसनेका काम न लिया जाना चाहिए; क्योंकि यह जहर चूसना है। यह इलाज सर्प-दंश होनेके बाद पाँच-सात मिनिटके भीतर ही किया जाना चाहिए, तभी काम देता है। जहर रक्तमें मिल गये बाद आराम होना कठिन है। मिट्टीके प्रयोग करनेवाले जुस्टने लिखा है कि उसने सॉपके काटनेसे मरेसे जान पड़ते हुए मनुष्यको मिट्टीके प्रयोगसे आराम किया है। उसने एक गढ़ा खोद कर बीमारको उसमें सुला दिया और उस पर खोदी हुई मिट्टी डालदी। इससे उस मिट्टीने बीमारको गरमी पहुँचा कर उसके जहरको चूस लिया। बीमार उठ खड़ा हुआ। ऐसे ही अन्यान्य उदाहरण भी जुस्टने दिये हैं। सर्प-दंशके विषमें मेरा निजी अनुभव नहीं है; परन्तु मिट्टीके अन्यान्य प्रयोग किये बाद मिट्टी पर मेरी अचल श्रद्धा है। जहॉ पर दंश लगा हो उस जगहको छेदकर लाल बुकनी भरे बाद, या चूसे बाद, उस जगह मिट्टीकी आध इंच मोटी, लंबी और पोली पुलटिस बॉध देनी चाहिए। जैसे कि यदि हाथमें दंश लगा हो तो सारे हाथको पुलटिससे लपेट देना चाहिए। हर एक आदमीको चाहिए कि वह टीनके किसी वर्तन था डिब्बेमें मिट्टीको भर रक्खे। यहा मिट्टी पीस छान कर रक्खी रहनी चाहिए। उसे बाहर धूपमें इस तरह ऊपर रखनी चाहिए जिससे उसमें पानी न जा पावे। फटे हुए कपड़ोंके पट्टे भी तैयार करके रख छोड़ना चाहिए। यह तैयारी सर्प दंशके ही लिए नहीं, अनेक अकस्मात्, तकलीफोंके लिए भी काम देगी।

बीमारको बेहोशी होने लगे या श्वासोच्छ्वास बंद हो तो पानीमें डूबे हुए मनुष्यके लिए जो कृत्रिम श्वासोच्छ्वासके उपाय बताये हैं उन्हीका यहाँ भी प्रयोग करना चाहिए। बे-होशी होती हो तो उसे गरमपानी या लवंग और तजकी उकाली देनी चाहिए। बीमारको खुली हवामें रखना चाहिए; परन्तु इस पर ध्यान रखना चाहिए कि वह ढका हुआ रहे। शरीर ठंडा होता हुआ जान पड़े तो शरीरके आस-पास गरम पानीकी बोतलें रखनी चाहिए, या, गरम पानीमें निचोड़ी हुई फलालेनकी गद्दी रखकर उसे गरमी पहुँचानी चाहिए।

१३ अकस्मात्-बिच्छू वगैरहका काटना ।

हम लोगोंमें कहावत प्रसिद्ध है कि बिच्छूके डंककी वेदना किसीको भी न हो। बिच्छूके डंककी बड़ी ही सख्त वेदना होती है। सर्प-दंशकी अपेक्षा भी बिच्छूके डंककी विशेष वेदना है। ऐसा होने पर भी हम सर्पसे ज्यादा डरते है; क्योंकि उसके दंशमें मौतका भय है। बिच्छूके काटनेसे बहुत करके मौत नहीं होती। डाक्टर मूरका कहना है कि जिस मनुष्यका रक्त साफ है उसे बिच्छूकी तकलीफ कम होती है।

बिच्छूके डंक और ऐसे ही डंकोंका इलाज सहज है। जहाँ पर डंक लगा हो उस जगह अनीदार चाकूसे छेदकर उस जगहका खून निकाल डालना चाहिए। फिर डंकको चूसकर थूक देना चाहिए। वेदना आगे न बढ़े इसके लिए डंकके ऊपरकी ओर एक बंध बाँधकर ऊपरसे मिट्टीकी बड़ी भारी पुल-टिस बाँध देनी चाहिए। मिट्टीकी पुलटिससे एकदम वेदनाका बंद हो जाना सम्भव है।

कितनी ही पुस्तकोंमें लिखा है कि सिरका और पानी समभाग मिला-कर और उसमें कपड़ेकी गादी भिगोकर उसे डंक पर रखनी चाहिए। डंकके पासका भाग नमकके पानीसे धोते रहना चाहिए। वह भाग पानीमें डूबा रखने योग्य हो तो पानीमें डुबाये रहना चाहिए। परन्तु इन सब उपा-योंसें मिट्टीकी पुलटिस सबसे अच्छी और बलवती है। इस बातका अनुभव उसे भी हो जायगा जिसे अभाग्यसे बिच्छूने काटा होगा और वह इस प्रयोगको करेगा। इस बातको स्मरण रखना चाहिए कि पुलटिस जहाँतक हो बड़ी बनाई जावे। उसके लिए दो-सैर मिट्टी भी ज्यादा नहीं है। कल्पना करो कि उँगुलीमें बिच्छूने काटा है। ऐसी सूरतमें कुहनीतक मिट्टीका बाँधना ज्यादा नहीं है। एक लम्बे बर्तनमें मिट्टीको मलकर उसमें हाथ डुबो दिया जाय तो वेदना तुरंत कम पड़ जायगी। कानखिजूरा, ततैया आदिके डंकके लिए भी ऊपर लिखा हुआ इलाज उत्तम है।

१४ पूर्णाहुति ।

आरोग्यके सम्बन्धमें जितने प्रकरण मैंने लिखना चाहा था वे पूर्ण होगये । यदि मुझे अवकाश मिला तो कितनी साधारण वस्तुओंके गुण और उनके उपयोगके सम्बन्धमें मेरी और कुछ लिखनेकी इच्छा है । पाठकोंकी आज्ञा लेनेके पहले इन प्रकरणोंके उद्देशको फिर एकवार देख जाना ठीक जाना पड़ता है ।

मेरे चित्तमें बार बार यह प्रश्न उठा करता था कि मैंने ये प्रकरण क्यों लिखे ? मैं तो वैद्य नहीं हूँ । इस विषयमें मेरा ज्ञान तो बहुत ही थोड़ा है। मेरी सूचनायें कहीं अधूरे विचार और अधूरी देख-भालसे तो नहीं हुई हैं ? विचार करनेसे जान पड़ा कि मेरे विचार और देख-भाल अधूरे ही है । इनकी पूर्णता हो भी नहीं सकती । इसका कारण यह है कि प्रतिदिन जो नित्य नई बातें देखनेमें आती हैं उनसे विचारोंमें भी परिवर्तन होता रहता है । तब फिर यह प्रयत्न क्यों किया गया, इस प्रश्नका उत्तर साधारण तौर पर यह दिया जा सकता है कि वैद्यक बना ही अपूर्ण प्रयोगों पर है । इस पर भी ' ऊँट–वैद्य'की दशा विशेष देखी जाती है । ये सब प्रकरण भी ही ' ऊँटवैद्य ' के सदृश ही समझ लिये जॉय तो कोई हानि नहीं हैं; परन्तु इन यहमें विशेषता है कि ये निर्दोष हेतुसे लिखे गये हैं । इनका मतलब बीमारी होने पर इलाज करनेका नही हैं; परन्तु बीमारियोंके रोकनेका मार्ग बतलानेका है । विचार करनेसे जान पड़ेगा कि व्याधि रोकनेके मार्ग सीधे हैं । उनके जाननेके लिए कोई खास ज्ञानकी आवश्यकता नहीं है । पर उन पर चलना कठिन है । कितनी ही बीमारियोंके सम्बन्धमें लिखना इस लिए योग्य समझा गया है कि सब व्याधियोंका मूल बहुत अंशोंमें एक है और इस लिए उनका इलाज भी एक ही होना चाहिए । और भी एक बात है कि सावधान रहने पर भी इन

प्रकरणोंमें बतलाई हुई बीमारियाँ प्रायः हुआ करती हैं । इनके उपाय करीब करीब सब मनुष्य जानते है । उसमें मेरा अनुभव और भी शामिल हो जाय तो कुछ हानि होना सम्भव नहीं है ।

मुख्य प्रश्न पर विचार करना अभी बाकी ही है कि आरोग्यकी आवश्यकता ही क्या है ? हमारा वर्त्ताव देखनेसे तो यही जान पड़ता है कि हमें आरोग्यकी कोई आवश्यकता नहीं है । और यदि आरोग्यका ध्येय यही हो कि शरीरको हृष्ट-पुष्ट कर ऐशो-आराम भोगते रहना, शरीरही को इस संसारमें सार समझना और उसे सुदृढ़ देखकर उसका गर्व करना, तो ऐसे आरोग्यसे शरीरका बीमार रहना ही अच्छा है ।

सब मतोंने इस शरीरको ईश्वर प्राप्तिका साधन मन्दिर माना है । हमें यह किराये पर मिला है । हमे उसके किरायेके बदलेमें स्तुति-प्रार्थना करनी पड़ती है । किराये पर रहनेकी दूसरी शर्त यह है कि हमें मकानका दुरुपयोग न करना चाहिए । उसे भीतर और बाहरसे स्वच्छ रखना चाहिए । नियत समयके बाद हमें चाहिए कि हम गृह-स्वामीको उसका मकान वैसी ही अच्छी दशामें सुपुर्द करें जैसी कि अच्छी दशामें वह हमें मिला है । यदि किरायेकी सब शर्तोंका हम अच्छी तरह पालन करें तो मुद्दत पूरी होने पर मालिक हम पर बहुत खुश होता है ।

जीवमात्र शरीर-धारी है । सबके शरीरकी आकृति लगभग एकहीसी है—अर्थात् सबके सुनने, देखने, सूँघने और भोग भोगनेके द्वार है; परन्तु मनुष्य-देहका वर्णन चिन्तामणि-रत्न कह कर किया गया है । चिन्तामणि-रत्नका अर्थ यह है कि इस रत्नसे हम जो चाहें सो पा सकते हैं । पशु-शरीरके द्वारा जीव ज्ञानपूर्वक भक्ति-स्तुति नहीं कर सकता । और ज्ञानपूर्वक भक्ति न करनेसे मुक्ति नहीं हो सकती । मुक्ति न होनेकी दशामें सच्चा सुख नही मिलता और दुःखोंका नाश नहीं होता । शरीर-का सदुपयोग हो, उसका उपयोग ईश्वरीय गृह करके किया जाय तभी

वह कामका है। अन्यथा, हाड़, मांस और खूनका गंदा बोरा है। उसमेंसे निकलते हुए हवा और पानी गंदे हैं । उसके छोटे और बड़े छेदोंसे निकली हुई एक भी वस्तुको हम इकट्ठी कर रखना नहीं चाहते। उनका विचार करने, उन्हें देखने और उन्हें छूने मात्रसे हम कै कर डालते है और उनमें पैदा होते हुए जीव बड़े परिश्रमसे रोके जाते हैं। उसी शरीरके द्वारा हमें; लुचपन, दगा, कपट, चोरी, ढोंग, जारी वगैरह लाखों न करनेके काम करने पड़ते हैं। उसके लिए भाँति भाँतिके जतन करने पड़ते हैं। इतना कुछ जतन करने पर भी वह ऐसा नाजुक है कि थोड़ासा आघात सहनेकी भी उसमें शक्ति नही है। वह नष्ट हो जाता है।

यह शरीरकी वास्तविक दशा है। जिसका अच्छे-से-अच्छा उपयोग हो सकता है उस वस्तुमें उसके दुरुपयोग होनेकी भी सत्ता होनी ही चाहिए। ऐसा न हो तो उसकी कीमत ही नही आँकी जा सकती। सूर्यके तेजकी परीक्षा करनेके लिए हम शक्तिमान इसलिए होते है कि उसके अभावमें हम घोर अँधेरेको देख पाते है। और जिस सूर्यके बिना हम घड़ी भर भी जिन्दा नहीं रह सकते उसी सूर्यमें इतनी शक्ति है कि वह हमें जलाकर खाक कर सकता है। राजा बहुत अच्छा हो सकता ह वैसे ही महा नीच भी तो हो सकता है।

शरीर पर अधिकार जमानेके लिए जैसे ईश्वर प्रयत्न कर रहा है वैसे ही राक्षस–शैतान भी जी-तोड़ मेहनत करता है। जब. शरीर ईश्वराधीन रहता है तब वह रत्नके समान है और जब राक्षसके अधीन हो जाता है तब नरककी खानके सदृश हो जाता है। अन्यथा वैसे तो शरीर नरकसे भी अधिक खराब है। जो विषयोंमें फँसा हुआ है, दिनभर जिसमें सब तरहके गंदे और गंदगी पैदा करनेवाले पदार्थ जाते हैं, जिससे सदा दुर्गन्ध निकलती रहती है, जिसके हाथ-पैर चोरी करनेमें लगते हैं, जिसकी जबान न बोलने योग्य बोलती है और अखाद्य खाती है, जिसके कान न सुननेकी

बातें सुनते हैं, जिसकी आँखे न देखने योग्य वस्तुको देखती हैं और जिसका नाक न सूघने योग्य सूँघता है, उस शरीरको नरक न कहा जाय तो और क्या कहा जाय ? परंतु आश्चर्य है कि हम नरकको तो नरकके रूपमें देखते हैं; और शरीरका नरकके तौर पर उपयोग करने पर भी उसे दिव्यरूपसे देखते चले आते हैं। शरीरके सम्बन्धमें इस प्रकारका एक अद्भुत ढौंग- दंभ चला आ रहा है । पाखानेका उपयोग हम पाखाना समझ कर करेंगे; परन्तु कोई महल-मान्दिरका उपयोग पाखानेके तौर पर करेगा तो उसका परिणाम विपरीत ही निकलेगा । अर्थात् जो शरीर राक्षसके पंजेमें आगया हो उसकी तन्दुरुस्ती चाहनेकी अपेक्षा उसका विनाश चाहना ही सुखकारी है ।

आरोग्यके प्रकरणों द्वारा यह बतलानेका प्रयत्न किया गया है कि ईश्वरीय नियमोंके पालनेसे शरीर आरोग्य रह सकता है; परन्तु स्मरण रहे कि राक्षसी नियमोंके अधीन हो जानेसे शरीर कभी आरोग्य नहीं रह सकता । जहाँ सच्चा आरोग्य है वहीं सच्चा सुख है । सच्चा आरोग्य पानेके लिए हमें स्वादेन्द्रियको जीतना ही चाहिए । ऐसा करनेसे अन्यान्य विषयेन्द्रियाँ फिर अपने आप ही वश हो जाती हैं । जिसने इन्द्रियोंको जीत लिया, उसने जगत्को वश कर लिया, क्योंकि वह मनुष्य ईश्वरका वारिस-उसका अंश हो जाता है । राम न रामायणमें है, कृष्ण न गीतामें है, खुदा न कुरानमें है और क्राईस्ट न बाइबिलमें है, किन्तु ये सब मनुष्यके चरित्रमें हैं; और चरित्र नीतिमें है । नीति सत्यमें है । सत्य है सो ही शिव है, ऐसा जो कह जाता है वह सत्य यही है । और हमारे इन प्रकरणोंके लिखनेका भी यही मुख्य उद्देश्य है कि वह सत्य इन आरोग्यके प्रकरणोंमें भी पाठकोंको देख पड़े ।

समाप्त ।